Regi. No.: MP HIN / 2006 / 16764 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. भोपाल / 632 /2018 - 20

वीर निर्वाण संवत २५४३
माह- जून २०१८
अङ्क -३ (१८४)
वर्ष -१३ (१८)

विरागवाणी

मासिक

आशीर्वाद

संत शिरोमणि प.पू. आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज

प्रेरक : ब्र. श्री विशल्य भारती जी
निर्देशन : मुनि श्री विवर्धन सागर जी महाराज
सम्पादक : इंजी.आनन्दकुमार जैन, 9425620668
175, एम. गौतम नगर, भोपाल
सहसम्पादक : श्री देवकुमार जैन गुड़ा
४९/सी, कस्तूरबा नगर, भोपाल
मो. 09425608438
परामर्श मण्डल : डॉ. प्रो. सनत जैन, जयपुर
: श्री अनिल सेठिया महुआ (भीलवाड़ा)
: श्रीमति प्रमिला जैन 'पम्मी' कोटा
: प्रो.श्री मयंक जैन, टीकमगढ़
: श्री मुकेश जैन, पथरिया
: श्री कपूरचंद बंसल, जतारा
प्रकाशक एवं
प्रबंध सम्पादक : श्री अनूप कुमार जैन
कार्यालय : जी-१४१ गौतम नगर, भोपाल-२३
☎: 0755-2789703, मो.9425016879
Email-viragvani.jain@yahoo.com
(बैंक ड्राफ्ट 'विरागवाणी'के नाम से भेजें) पत्रिका के सम्बंध में पत्राचार एवं रचनाएँ कार्यालय के पते पर भेजें
कार्पोरेशन बैंक : A/c No. 065300201000101
IFSC CODE : CORP0000653
स्वामित्व : श्री सम्यग्ज्ञान दि. जैन विराग विद्यापीठ, भिण्ड (म.प्र.)

इस वेबसाइट से गणा. विरागसागर जी के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करें। www. ganacharyaviragsagar.org

विरागवाणी सदस्यता

परम शिरोमणी संरक्षक	-	५१०००/-
शिरोमणि संरक्षक	-	११०००/-
परम संरक्षक	-	५०००/-
संरक्षक	-	३१००/-
दस वर्ष	-	११००/-
मूल्य	-	१०/-

- **समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र भोपाल होगा।**
- **प्रकाशित विचारों से संपादक की सहमति जरूरी नहीं हैं। वह लेखक के अपने विचार हैं।**

पल्लव दर्शिका

❖ **सम्पादकीय :** **पल्लव**
- श्रुत स्कंध: इंजी.आनन्दकुमार ४
- आत्मचिन्तन ५
- जिनोपदेश : श्रमणी आर्यि. विचक्षणाश्री माता ५

❖ **प्रवचन एवं लेख**
- ध्यान : प.पू.श्री विरागसागर महामुनिराज ६
- आत्म अनन्त शक्तिवान: श्रमणा.विमर्शसागरजी ७
- वर्षायोग की प्राचीन पद्धति आज भी जीवंत है : प.पू.श्री विरागसागर महामुनिराज ८
- पर का कर्त्ता मानना सबसे बड़ी मूढ़ता : आचार्य विशुद्धसागर जी १०
- दुनियाँ में सब कुछ भूल जाना लेकिन गुरु को कभी मत भूलना : प.पू.श्री विरागसागरजी महा. ११
- शराब व्यक्ति ही नहीं, परिवार को भी नष्ट करती है : प.पू.श्री विरागसागरजी महा. १५
- वेतनएनर्जी का : प.पू.श्री विरागसागरजी महा. १६
- गुरु चित्र : शिष्य दर्पण १६
- गुरु एक, रूप अनेक : मुनि विनन्दसागर जी १७
- भाव शुद्धि का प्रभाव :आर्यि विशिष्टश्री माताजी १८
- भाग्य और लक्ष्मी:आर्यि. वियोजनाश्री माताजी १९
- ज्ञान का अभिमान नहीं :आर्यि. विदूषीश्रीमाताजी २०
- कर्माधीनता में नहीं... : आ.विनम्रसागर जी महा.२१
- आँसू झलक आये : आर्यिका विसंयोजनाश्री माता २१
- जय वीतराग जय... : आर्यि. विजिज्ञासाश्री माता २२
- गुरु पूर्णिमा पर गुरु चरणों में समर्पित भक्तों की पुष्पाञ्जली २५
- विद्यार्थियों का टाइम टेवल २९
- आ. शंका-समाधान : प.पू. श्री विरागसागर जी ३१

❖ **कविताएँ**
- निर्दोष : आ.श्री विशुद्धसागर जी १७

❖**स्वास्थ्य जगत :**
- आम के आम ... : आर्यि.विवक्षाश्री माताजी ३०

❖ **विराग वर्ग पहेली** ३४

संपादकीय

श्रुत स्कंध

इंजी. आनन्द कुमार जैन

वैदिक पुराणों में पढ़ा है कि जब समुद्रमंथन हुआ था, तब उसमें से चौदह रत्न निकल थे। उनमें एक विष भी था। जन समुदाय के कल्याण को ध्यान में रखकर शिव ने गरल पान किया था। मानव जीवन की अनमोल सम्पत्ति संयम साधना है। जो व्यक्ति अध्यात्म जीवन के कई शिखरों को पार कर लेता है, उस गुण सम्पदा-विभूषित पुण्यात्मा का गुण स्तवन करना हम सभी का कर्त्तव्य बन जाता है। भूतबलि ने षट्खण्डागम की रचना ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी को पूर्ण करके चतुर्विध संघ के साथ उस दिन श्रुत्ज्ञान की पूजा की थी जिससे वह तिथि आज भी श्रुत पंचमी अथवा ज्ञान पंचमी के नाम से जानी जाती है। उसी समय से उसी की पावन स्मृति में उसकेि समस्त अनुयायी आज भी श्रुत पंचमी मनाते आ रहे हैं। इस दिन दिगम्बर जैन प्रतिवर्ष शास्त्रों की पूजा करते हैं। उनकी साफ सफाई और जीणोद्धार करते हैं तथा नये वेष्टनों में बांधकर सुरक्षित करते हैं। श्रुत की यह व्यवहार पूजा है। निश्चय पूजा है श्रुत के अर्थ को आत्मसात् करना, भावश्रुत को हृदयगम करना। जिसका फल होता है मिथ्यात्व से मुक्ति। वर्तमान युग में श्रुत का अभ्यास बड़े पैमाने पर हो रहा है। यह एक शुभ लक्षण है। श्रावकों में तत्वार्थ सूत्र, रत्नकरण्ड श्रावकाचार, द्रव्य संग्रह, गोम्मटसार, समयसार, प्रवचनसार आदि ग्रन्थों के स्वाध्याय की प्रवृत्ति बढ़ी है। साधु सन्तों और पण्डितों के प्रवचनों में उमड़ती हुई भीड़ देखी जाती है। शास्त्रों का प्रकाशन व्यापक स्तर पर हो रहा है। पत्र पत्रिकाओं के द्वारा शास्त्रों के रहस्य खोले जा रहे हैं, शंकाओं का समाधान किया जा रहा है। शोध ग्रन्थ लिये जा रहे हैं। संगोष्ठियों में शोध आलेख पढ़ जा रहे हैं। इसका तात्पर्य है कि हर तरह से श्रुत के अर्थ को हृदयगम करने और कराने की कोशिश की जा रही है। वर्तमान में बहुत सी अप्रकाशित पाण्डुलिपियाँ काल कवलित होती जा रही हैं। पाण्डुलिपियों को सुरक्षित रखने के लिये हमारी समाज प्रान्तीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर पाण्डुलिपि संग्राहलय केन्द्रों की स्थापना करे और उन संग्रहालयों में सभी का लेमीनेशन अथवा मइक्रो फिल्म बनाकर पूर्ण सुरक्षा दी जाये।

परम पूज्य १०८ गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ने बताया कि श्रुत पंचमी पर्व शास्त्र भण्डारों के प्रारंभ किये जाने का पर्व है। इस दिन हम श्रुतदेवी की पूजा उपासना के साथ संकल्पित हो कि वर्तमान में जितना भी आगम उपलब्ध है उसी पूर्ण सुरक्षा करने में हम तन मन और धन से सदैव आगे रहेंगे और मां जिनवाणी का स्वयं पान करते हुये। उसको जन-जन तक पहुँचाने में अग्रसर रहेंगे। उन्होंने बताया कि सभी श्रावकों को श्रुत पंचमी पर्व अवश्य मनाना चाहिये।

इस दिन श्रुत की पूजन करें, शास्त्रदान, वेष्ठन भेंट कर एवं ज्ञान दान देकर जीवन सार्थक बनायें। कौण्डेश नामक ग्वाले ने मुनि महाराज को शास्त्र दान दिया। इस प्रकार अगले भव में कुन्दकुन्दाचार्य बने। इस प्रकार हम सब मानव जीवन को अलौकिक ज्ञान से प्रकाशित कर सकते हैं।

आत्मचिन्तन

(प.पू. आ. श्री १०८ विमलसागर जी महाराज की नित्य डायरी से साभार २०.४.१९८२)

।। ऊँ ह्रीं णमो लोए सव्व साहूणं।।

हे आत्मन्! संसारी भव्य प्राणी संसारार्णय से पार करने के लिए वीतरागी सर्वज्ञ हितोपदेशी यानि रागी द्वेषी देवों से रहित देयाधिदेव शत इन्द्रों कर वंदनीय देव प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग स्वरूप सिद्धान्त रूप शास्त्र आचार्य उपाध्याय (पाठक) साधु मुनियति गुरु की भक्ति व आदर श्रद्धान्वित विनयाचार सहित स्तुति वंदना करना ही अर्थात् भक्ति रूप औषधि है। जिन-जिन महानुभावों ने भी उनकी भक्तिकर प्रदर्शन कर संसार शरीर भोगों से विरक्त होकर व्रत संयम धारणकर आनन्दधन चिदान्नद परमानन्द सहजानन्द परमात्मा की भक्ति का फल है। अत: भक्ति से मुक्ति मिल जाती है और जो भक्ति देव शास्त्र गुरु की भक्ति करने से भावों की प्रसिद्धि है। आत्म सुख की प्राप्ति ही कार्य की सिद्धि की पहिचान है यही श्रेयोमार्ग है।

अत: हे विमलात्मन्! संसारी भव्यों के लिये तारण तरण वीतराग परमात्मा की भक्ति कर लेना ही सर्वोत्कृष्ट आत्म संयम की सिद्धि ही संसारार्णव से पार होने के यथाशक्ति हो, वैसी भक्ति ही संसारार्णव से पार होने के लिये भक्ति ही रत्नत्रय की पूर्ण सिद्धि ही करना ही श्रेयोमार्ग की सिद्धि है। ऐसा जिनेन्द्र भगवान ने अपनी आत्म शोभा को प्राप्त किया है।

जिनोपदेश

तिलमइं दिण्णइं जिणभर्वाण जणि अणुराह ण माइं।
चंदकंति चंढ़हं मिलिउ पाणिय दिण्ण ण ठाइ।। १९७।।

जिन भवन पर तिलक देने से अर्थात् शिखर पर कलशा चढ़ाने से जगत् में उसका अनुराग नहीं समता जैसे चन्द्रकान्तमणि चन्द्रमाकी किरणों से मिलकर पानी देने से नहीं सकता है।

चंदोवइं दिण्णइं जिणहं मणिमंडियह विसाल।
अह संबंधा ससहरहं गहतारायणमाल।। १९८।।

जिन भगवान को चढाये हुए मणि-मंडित विशाल चन्दोवा (ऐसे प्रतीत होते है) जैसे ग्रह और तारा गण की माला चन्द्रमा से सम्बद्ध हुई हो।

भण्वुच्छाहणि पावहरि जिणहरि घंट रसंति।
कुमुयाणंदणि तमहरणि छणजामिणि ण हु भंवति।। १९९।।

जिन मंदिर में बजता हुआ घंटा भव्यजनों का उत्साह-वर्धक एवं पाप-हारक होता है। पूर्णचन्द्रवालि रात्रि कुमुदों को आनन्द देने वाली और अन्धकार को हरने वाली होती है।

चिंध चमर धन्तइं जिणहं दिण्णहं लब्भइ रज्जु।
अह पारोहहिं णिगाथहिं वडु वित्थरइ ण चोज्जु।। २००।।

जिन भगवान को ध्वजा, चमर और छत्र चढ़ाने से राज्य प्राप्त होता है। यदि प्रारोहों (जटाओं) के निकलने से वटवृक्ष विस्तृत हो तो कोई आश्चर्य नहीं है।

जिणहरि लिहियइं मंडियइं लच्छि समोहिय होइ।
पुण्णु मंहतक तासु फलु कहिवि कि सक्कर कोइ।। २०१।।

जिन मंदिर में मांडने लिखने से मनोवांछित लक्ष्मी प्राप्त होती है, और महापुण्य होता है। उसके फलको कहने के लिए कोई भी समर्थ नहीं है।

जंबदीउ समोसण्णु णंदोसर लोयाणि।
जिणवरभवणि लिहावियइं सयलहं दुक्खहं हाणि।। २०२।।

जम्बूद्वीप, समवशरण, नन्दीश्वरद्वीप और तीन लोकों की रचना को जिनेंद्र भवन में लिखवाने से सकल दुखों की हानि होती है।

साभार ग्रंथ- श्री सावयधम्मढोहा समन्ता

ध्यान

प्रवचन- प.पू. राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महामुनिराज के ध्यान शिविर से

सिद्धं संपूर्ण भव्यार्थं, सिद्धे कारण मुत्तमम्।
प्रशस्त दर्शन ज्ञान, चारित्र प्रतिपादिनम्।।
सुरेन्द्र मुकुटश्लिष्ट, पादपद्मांशुकेशरम्।
प्रणमामि महावीरम्, लोकत्रितय मंगलम्।।
खम्मामि सव्व जीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ति में सव्व भूदेसु, वैरं मज्झं ण केणवि।।
राय बंध पदोसं च, हरिसं दीण भावथं।
उस्सुगत्तं भयं शोगं, रदिमरदिं च वोस्सरे।।
हा दुट्ठ कथं हा दुट्ठ चिंतयं, भासियं च हा दुट्ठं।
अंतो-अंतो डज्झमि, पच्छत्तावेण वेयंतो।।
दव्वे खेत्ते काले, भावे च कदावराह सोहणयं।
णिंदण गरहण जुत्तो, मणवचकायेण पडिक्कमणं।।
जीविय परणे लाहा, लाहे संजोग विप्पजोगे य।
बंधरिय सुहदुक्खादो, समदा सामायियं णाम।।
समता मे सव्व भूदेसु, संयमः शुभ भावना।
आर्त्तरौद्र परित्यागस्तद्धिं सामायिकं मतं।।
ओकारं बिन्दु संयुक्तं, नित्यं ध्यायंति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमो नमः।।

हम आज प्रातःकाल की बेला में, प्रशान्त वातावरण में, शांत वातावरण में इस पवित्र बेला में मन के सारे विकल्पों को छोड़कर, सभी आकुलता व्याकुलता को छोड़कर सामर्थ्य बनाते हुये ध्यान के लिये तत्पर हुआ हूँ। हमारे आत्मविशुद्ध परिणामों ने मन को प्रसन्नता से भर लिया है क्योंकि आकुलता के समाप्त होने पर ही आत्मा की अनुभूति होती है। यह साधना की सर्वोत्तम विधि है जब तक हम संसार विषयक आकुलता को नहीं छोड़ते तब तक हमें शांति की अनुभूति, आनंद की अनुभूति नहीं हो सकती। जितनी जितनी मात्रा में आकुलता बढ़ती जाती है उतनी उतनी मात्रा में शांति, आनंद की वृद्धि होती है अथवा जितनी जितनी शांति, आनंद की अनुभूति बढ़ती जाती है इतनी आकुलता समाप्त हो जाती है, उतनी व्याकुलता समाप्त हो जाती है। आत्मविशुद्धि हमारे आधीन है, आत्मविशुद्धि हमारे आधीन है, जी हाँ हमारे ही आधीन है। जब हमारा मन बाह्य जगत से हटता है, आत्मा का आश्रय लेता है तो आत्मविशुद्धि जगती है। बाह्य जगत संक्लेशता उत्पन्न करता है। संकल्प विकल्पों को उत्पन्न करता है ये संकल्प-विकल्प से मुक्ति नहीं हो सकती किन्तु स्थूल विकल्पों से मुक्ति पा सकते हैं, मैं धनवान हूँ, मैं गरीब हूँ, मैं बीमार हूँ, मैं सुखी हूँ, मैं दुखी हूँ, मैं पंडित हूँ, मैं गृहस्थ हूँ, मैं मुनि हूँ, इत्यादि प्रकार के जितने भी अहंकार भाव होते हैं यही तो संकल्प है। सामायिक के इस पवित्र बेला में उस संकल्प का त्याग करता हूँ मैं तो मात्र एक अनंत ज्ञान पुंज, शुद्धात्मा हूँ। इसके अलावा बाह्य जगत विषयक मेरा कुछ भी नहीं है। धनवान, रुपवान, पंडित ये सब बाहर के विकल्प हैं अंतर्मात्मा इनसे रहित है। हर प्राणी की आत्मा एक जैसी है, सर्वशक्ति संपन्न है, समान है। मैं इस पवित्र बेला में विकल्पों से भी मुक्त होता हूँ।

'ममेदं इति विकल्पं' ये मेरे हैं, मैं उनका हूँ ये सब विकल्प है। दुकान, मकान, कुटुम्ब, परिवार, धन, दौलत, पिता, माँ, भाई-बहन, बेटा-बेटी और भी नाते-रिश्ते ये सब हमारे हैं, जब तक ऐसा विकल्प मन में रहेगा, तब तक साधक आत्मविशुद्धि की गहराई में नहीं उतर सकता, आत्मा का आनंद प्राप्त नहीं कर सकता। निश्चय से आत्मा ही मेरी है। इसके

अलावा कुछ भी मेरा नहीं है। जब शरीर ही मेरा नहीं, क्योंकि यह यहाँ ही एक दिन मिट्टी के रूप में पड़ा रह जायेगा, हमारे साथ नहीं जायेगा। तो मैं किसको अपना मानूँ, कौन मेरे हो सकते हैं। बाह्य जगत का एक परमाणु मात्र भी मेरा नहीं है। मोह और अज्ञानता में बाह्य को ही अपना मानते रहे और उनसे होने वाले तरह तरह के विकल्प में रहे। इसको आज मैंने समझा है अत: आज संपूर्ण विकल्पों का त्याग करता हूँ, स्थूल विकल्पोंसे विरक्त होता हूँ। योगीजन सूल्य विकल्पों का भी त्याग कर निर्विकल्प दशा को प्राप्त करते हैं। आत्मा की गहराई में उतर जाते हैं। तब उन्हें शुद्धात्मा नजर आती है। नजर का अर्थ है कि उन्हें उस आत्मा का संवेदन होता है क्योंकि आत्मा अरूपी है वह चर्मचक्षुओं से नहीं दिखती, आंखों से नहीं दिखती। अत: आंखों से देखने का प्रयास प्रयत्न व्यर्थ है, आत्मा के रूप का ध्यान करना व्यर्थ है। वह अरूपी होती है। साधक अपनी अनुभूति के द्वारा ही आत्मा से साक्षात्कार करता है, आत्मा की अनुभूति करता है। इसे ही स्वसंवेदन कहते हैं। गृहस्थ में सराग स्वसंवेदन होता है और अप्रमत्त योगियों के वीतराग स्वयंवेदन होता है। उन्हें वीतराग आत्मानुभूति होती है अत: वही उत्तम ध्यान हैं। गृहस्थ में अशुभ राग में प्रवृत्ति को छोड़ शुभ राग में रहते हैं अत: वह सराग स्वसंवेदन है। अत: इससे ही हम 'ऊँ' का ध्यान करते हैं।

ओकारं बिन्दु संयुक्तं, नित्यं ध्यायंति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमो नमः।।

हम अपने मस्तिष्क में बार बार 'ऊँ' का ध्यान करते हैं। साकार दर्शन करते हैं। सफेद वर्ण का 'ऊँ' शुक्ल लेश्या, परिणामों की निर्मलता, विशुद्धि का प्रतीक है। लाल 'ऊँ' आवेग का, क्रोध का प्रतीक है। वह 'ऊँ' अस्वस्थ बीमार के लिये हरे कलर में नजर आता है, कमजोर व्यक्ति के लिये नीले कलर में नजर आता है और कलुषित मन वाले को, विषय वासना वाले व्यक्तियां के लिये धुंधला व काला 'ऊँ' नजर आता है। मन की चंचलता में अस्पष्ट, कटा, टूटा आदि अशुभ 'ऊँ' माना जाता है और सही 'ऊँ' शुभ माना जाता है। हम मस्तिष्क में सफेद 'ऊँ' को देखते हैं जो प्रकाश पुंज सूर्य से भी अधिक चमकता नजर आता है तथा जो केवल मन को ही नहीं आत्मा को भी पवित्र करने वाला है, आपत्ति, विपत्ति, कष्ट, दुख, आधि-व्याधि को नष्ट करता है दूर करता है तथा ही 'ऊँ' मात्र ही परम्परा से निर्वाण, मुक्ति प्राप्ति का कारण है अत: इस पंच परमेष्ठी 'ऊँ' के लिये बार-बार नमस्कार करता हूँ।

आत्मा अनन्त शक्तिवान

मुनि श्री विमर्शसागर जी

आत्मा में अनन्त शक्तियाँ विद्यमान हैं। आत्मशक्ति को प्रकट करने के लिये सच्चा संकल्प चाहिये। मानव आत्मशक्ति को भूलकर पर पदार्थ की शक्ति को खोजकर आनंदित हो रहा है। पदार्थ की शक्ति को खोजने वाला वैज्ञानिक कहलाता है। परमार्थ स्वरूप चेतन की शक्ति को खोजने वाला भगवान् होता है। इस धरती पर जिसने भी आत्मशक्ति को खोजकर पाया, वही मानव भगवत्ता को जीवन में प्रकट कर सका।

एक परमात्म जिज्ञासु किसी फकीर के पास पहुँचा। बोला मैं परमात्मा का दर्शन करना चाहता हूँ। आप हमें वह उपाय बतायें, जिससे हम अपनी जिज्ञासा का पूर्ण समाधान कर सकें। फकीर ने कहा- अभी तो हम स्नान के लिये जा रहे हैं। जिज्ञासु फकीर के साथ नदी पर पहुँचा। फकीर नदी में उतरकर स्नान करने लगा। फकीर ने जिज्ञासु भक्त को आवाज दी। वह भी स्नान कर ले। जिज्ञासु भक्त जैसे ही फकीर के करीब पहुँचा। फकीर ने गर्दन पकड़कर पानी में डुबो दी। जैसे-तैसे जिज्ञासु नदी से बाहर आया। फकीर ने पूछा-जब हमने तुम्हारी गर्दन नदी में डुबा दी तब तुम्हारी क्या आकांक्षी थी। जिज्ञासु भक्त ने कहा- एक ही संकल्प था, मैं नदी से बाहर अपनी गर्दन निकालूँ। फकीर ने कहा- परमात्म दर्शन के लिये इतना ही गहन संकल्प चाहिये। यदि इतना संकल्प हो, तो हमारे साथ चलो। अन्यथा लौट जाओ।

आत्माशक्ति को उद्घाटित करने के लिये दृढ़ संकल्प चाहिये। और इसके साथ ही आत्मा को प्राप्त करने की प्यास तथा धैर्य चाहिये। परमात्मा के अनन्त गुणों की प्राप्ति के लिये अनन्त प्रतीक्षा भी करनी पड़ेगी। आज मनुष्य पदार्थ की शक्ति को खोजकर आविष्कार सृजन कर रहा है। यदि आत्म शक्ति को खोजे, तो निज परमात्मा का आविष्कार कर सकता है।

वर्षायोग की प्राचीन पद्धति आज भी जीवंत है

प्रवचन- प.पू. राष्ट्रसंत, सूरि गच्छाचार्य, गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज

बन्धुओ! वर्षायोग में दो शब्द जुड़े हुए हैं वर्षा + योग = वर्षायोग इसका अर्थ होता है वर्षात् काल में योग की धारणा। हमारे शास्त्रों में योग के अनेक अर्थ हैं जिसमें से मन, वचन, काय के व्यापार को रोकने का नाम भी योग कहलाता है।

प्राचीन काल में ऐसे भी मुनिराज होते थे जो वर्षाकाल में चार माह तक वृक्ष के नीचे स्थिर आसनसे अनवरत साधना करते रहते थे। वे चार माह तक न आहार लेते थे, न पानी, न हिलना, न उठना पाषाण की प्रतिमा की तरह स्थिर रहते थे। छहढ़ालाकार पण्डित दौलतराम जी ने उनका चित्रण करते हुए कहा है-

तिन सुथिर मुद्रा देख मृग गण उपल खाज खुजावते। उनकी स्थिर मुद्रा के देख मृगगण सोचते थे कि यह कोई मूर्ति है और निर्भीकता से वहाँ विचरण करते थे। लेकिन शनै-शनै संहनन की हीनता बढ़ती गई और वह वर्षायोग कालान्तर में वर्षावास में बदल गया। आज वर्तमान में मुनिजन वर्षाकाल में एक स्थान पर निवास करते हैं।

पूज्य आचार्य कुन्दकुन्द देव कहते है कि इस काल में इतनी सामर्थ्य, इतनी शक्ति नहीं है कि वृक्ष के नीचे अथवा पर्वत पर एक आसन से स्थिर चार माह तक खड़े अथवा बैठे रह सकें। अत: उन्होंने साधुओं के लिए आज्ञा दी कि वर्षाकाल में आप सभी वर्षावास करें अर्थात् एक जगह निवास करें विहार न करें क्योंकि विहार करने में विचरण करने में विभिन्न जीवों की विराधना हो सकती है। पानी बरसने से जमीन में अनेकों अंकुरण उत्पन्न हो जाते हैं साथही छोटे-बड़े आदि कई प्रकार के सम्मूर्च्छन जीवों की भी उत्पत्ति हो जाती है और जब उनके बिलों में बरसात्का पानी जाता तो वे जीव भी बिल से बाहर आकर धरातल पर स्वछंद विचरने लगते हैं। उनमें कितने ही जीव इतने सूक्ष्म रहते हैं जो हमें दृष्टि से दिखाई नहीं देते हैं उनकी अधिक मात्रा में हिंसा हो सकती है। पानी के कारण यत्र-तत्र के नाले नदियाँ भर जाती है। जिसके कारण यातायात की व्यवस्था समाप्त हो जाती है। आवागमन के मार्ग अवरोध हो जाते हैं, इसलिए संयमकी रक्षा के लिए साधुजनों को एक स्थान पर निवास करना चाहिए।

पूज्य आचार्य अपराजित स्वामी भगवती आराधना की टीका में लिखते है कि यदि साधुजन वर्षाकाल में विहार करेंगे तो उनसे महान असंयम होगा। यही कारण है कि दयामूर्ति, करूणाशील अहिंसा महाव्रत के पालक अहिंसा की परिपालना के लिए एक स्थान पर चातुर्मास करते हैं।

प्राचीन काल से चली आई यह श्रमण परम्परा आज भी जीवित है और इस बात का संकेत देती है कि आज भी निर्ग्रन्थ मुद्रा को धारण करने वाले मुनि वर्षाकाल में वर्षायोग अथवा वर्षावास धारण कर एक स्थान पर निवास करते हैं।

बन्धुओ! चाहे दिगम्बर परम्परा हो चाहे श्वेताम्बर परम्परा हो दोनों में ही चातुर्मास की परम्परा अनवरत चल रही हैं और जब हम शास्त्र खोलकर देखते है तो ज्ञात होता है कि वैष्णव परम्परा में भी चातुर्मास का विधान है। बाल्मिकी रामायण में महर्षि बाल्मीकी ने लिखा कि मर्यादा पुरुषोत्तम राम भी वर्षायोग, वर्षावास, चातुर्मास करते थे। वे जिस स्थान पर रहते थे चार महीने वहाँ से बाहर नहीं जाते थे।

बौद्ध साहित्य में बुद्ध के विषय में भी उल्लेख मिलता है कि बुद्ध और उनकी परम्परा के भिक्षुगण भी चातुर्मास के नियम धारण करते हैं चातुर्मास में विचरण नहीं करते थे।

बन्धुओ! प्राचीन समय में ये परम्परायें वन, उपवन और जंगल में प्रचलित थी लेकिन वर्तमान में वैसे वन उपवन, जंगल रहे भी नहीं है वे समाप्त हो गये। किसी ने कहा है कि प्राचीन समय में जंगलों में जानवर रहते थे। वे खूँखार क्रूट होते थे किन्तु अब वे सिटी और नगरों में आ गये है इसलिए मुनिराजों को भी उनके बीच में विहार और चातुर्मास करने नगरों में आना पड़ा है।

जंगल पशु और पक्षियों से लगभग खाली हो चुके हैं गवर्मेन्ट के लिए भी इस बात की चिंता है यही कारण है कि अभ्यारण्य की योजना बनाई जा रही है जिससे उक्त सीमा को सुरक्षित किया जा रहा है। लेकिन वहाँ आवागमन अविरुद्ध रहता है सीमाएँ बंधी रहती हैं वहां पर निर्ग्रन्थ दिगम्बर संत विचरण नहीं करते हैं। वे किसी भी बारी अथवा वाउण्डरी का वहाँ के अधिकारी के बिना पूछे उलंघन नहीं करते हैं उनका उत्कृष्ट अचौर्य महाव्रत होता है।

बन्धुओ! आज एक ऐसा योग आ गया है। संस्कृत में योग का अर्थ होता है जोड़ना और दूसरा योग का अर्थ होता है दो जहाँ पर एक और एक मिलकर के दो बन जायें, दो और दो मिलकर के चार बन जायें तथा चार और चार मिलकर जहाँ आठ एवं और आठ मिलकर सोलह बन जाऐं ऐसा योग जहाँ पर बढ़ता जाता है उसका नाम वर्षायोग। दूसरा तात्पर्य यह है कि जहाँ धर्मरूपी जल बहता है उस नदी के दो तट होते हैं और वे दोनों तट यदि मजबूत हैं तो नदी का पानी यथा स्थान तक पहुँचकर जन मानस की प्यास बुझा सकता है लेकिन यदि दोनों में से एक भी तट कमजोर है तो वह पानी यथा स्थान नहीं पहुँच सकता है। दो तटों का अर्थ है मुनि और श्रावक रूपी तट। मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक, क्षुल्लिका यह एक तट है तथा श्रावक और श्राविकाओं का दूसरा तट है।

पूज्य आचार्य समन्तभद्र स्वामी ने जिन शासन की महिमा की बात कही-वहाँ उन्होंने सर्वोदयी शब्द का प्रयोग किया और कहा- यह सर्वोदयी शासन तभी तक जीवित रहेगा तब तक धर्म के दोनों तट जीवित रहेंगे। जब तक श्रमण और श्रावक का आर्यिका और श्राविका के तट मजबूत रहेंगे तब तक धर्म की गंगा निर्वाधरूप से बहती हुई प्राणियों की व्यास बुझाती रहेगी।

यूँ तो दिगम्बर मुनि अहर्निश विहार करते रहते हैं यदि कहीं उनके कदम ठहरते भी है तो दो, चार छह दिन जिससे धर्म पिपासु की प्यास बुझ नहीं पाती है।

बन्धुओ! यूँ तो सागर का जल खारा होता है और आपके सामने यहाँ इतने सारे सागर उपस्थित हैं सभी मुनिराज के पीछे सागर शब्द जुड़ा हुआ है। यह शब्द एकता, संगठन, प्रेम और वात्सल्य का प्रतीक है। मैं जब सोचता हूँ तो बड़ी प्रसन्नता होती है कि हमारे आचार्यों ने सभी के पीछे सागर शब्द जोड़कर बहुत अच्छा कार्य किया। लेकिन बाहर के सागर में और मुनिरूपी सागर में बहुत अंतर है उस सागर का पानी खारा होने से प्यास नहीं बुझा पाता परन्तु मुनिरूपी सागर से प्राप्त धर्मरूपी जल अत्यंत मीठा होने से प्यास बढ़ा देता है।

मुनिजन जहाँ चार दिन के लिए पहुंच जाते हैं तो वहाँ के लोगों की प्यास १ माह और चातुर्मास की प्रार्थना में बदल जाती है। जब हमारे संघ का भिण्ड में ६वाँ चातुर्मास हुआ तो उसी काल में वहाँ की समिति ने आगामी चातुर्मास का भी श्रीफल भेट किया। मैंने कहा- यह क्या कर रहे हो ६ चातुर्मास यहाँ हो चुके फिर भी प्यास नहीं बुझी, वे बोले आचार्य श्री यह एक ऐसी प्यास है जो बुझती नहीं अपितु और अधिक बढ़ती है। बन्धुओ! होना भी ऐसा ही चाहिए धर्म की प्यास जन-मानस के जीवन में निरन्तर बढ़ती ही रहना चाहिए।

हमारे शास्त्रों में जहाँ प्राणी संयम की बात है वहाँ इन्द्रिय संयम का भी कथन है। योगी जन इस वर्षाकाल में इन्द्रिय संयम को भी तप, त्याग साधना से संजोते हैं विभिन्न प्रकार के व्रत, उपवासों के, रस परित्याग के नियम एवं अन्न, हरी आदि की मर्यादा को बांधते हैं और इस रूप में भी हर्ष खुशी के साथ वर्षायोग करते हैं।

बन्धुओ! कई श्रावक मेरे पास आकर कहते हैं कि आचार्य श्री ८-१० दिन में तो हमारा डर ही दूर नहीं हो पाता है आपके पास आने से तो डर लगता है संकोच लगता है, घबराहट होती है। मैंने कहा- घबराते क्यों हो, मेरे पास न कोई लाठी है न अन्य अस्त्र-शस्त्र, न मैं किसी को डांटता हूँ, न तेज बोलता हूँ फिर घबराहट क्यों? बोले पता नहीं पास में आते-आते तो पसीना छूट जाता है। बन्धुओ! शास्त्रों में कहा है- तपस्वी का अर्थ यही है जो मूल में शीतल रहे लेकिन उसकी किरणे तेज हों, जैसे सूर्य जितना दूर जाता है उतनी ही उसकी किरणें गर्मी को उत्पन्न करती हैं लेकिन वह मूल में ठण्डा होता है। वैसी ही संत की साधना होती है जिन्हें देखकर लोगों को सहसा उनके पास आने में भय उत्पन्न होता है। किसी कवि ने कहा भी है- 'भय बिन प्रीत न होय गुसाई' जब तक भय नहीं होगा तब तक प्रीति नहीं हो सकती है सच्ची मात्रा में प्रेम नहीं हो सकता है। थोड़े समय तक लोगों को डर लगता है लेकिन कुछ समय बाद सब आसान हो जाता है।

आपको माता जी, महाराज की जितनी संख्या दिख रही है वे सभी एक दिन आप जैसे ही थे। पास आने में डरते थे। बात करते-करते कांपने लगते थे लेकिन धीरे-धीरे भय छूटता गया और अब वे ऐसे जुड़ गये कि बिछुड़ने का नाम ही नहीं लेते।

मैंने अपने संघ के महाराज से कुछ दिन पहले ही कहा था कि यदि किसी को अन्य स्थान पर चातुर्मास करने जाना हो तो जा सकते हैं। थोड़ा-थोड़ा संघ सभी जगह चातुर्मास कर सकते हैं। अनेक स्थानों के भक्त प्रार्थना कर रहे हैं वे साधु

संघों का चातुर्मास चाहते हैं लेकिन कोई कहीं नहीं गया। और तो क्या अब तो महाराज माता जी इतनी सजक हो गई कि उन्हें मालूम चलता है कि ये लोग अन्य जगह से चातुर्मास की प्रार्थना करने आये हैं तो कहती हैं बैठ जाओं यहाँ पर आगे नहीं बढ़ना। मैंने कहा- ऐसा क्यों किया। बोली- आचार्यश्री ये पता नहीं क्या करेंगे योग से कहीं वियोग न करा दें। हम सभी का साथ में वर्षायोग होना है हमें वियोग नहीं कराना।

बन्धुओ! यह सत्य है बिना पुण्य के साधुओं का वर्षायोग नहीं मिल पाता, भावना तो सभी की रहती है पुरुषार्थ भी बहुत कुछ लोग करते हैं लेकिन सफलता उन्हें ही प्राप्त होती है जिनका पुण्य प्रबल होता है। चातुर्मास काल में मात्र आहार दान ही नहीं, ज्ञानदान भी मिलता है। साधुओ से जुड़ने का अवसर प्राप्त होता है।

पर का कर्त्ता मानना सबसे बड़ी मूढ़ता

(कृतिकार- आचार्य विशुद्ध सागर जी महाराज)

हे योगी! ज्ञानचक्षु से देख, कहीं तू मूढ़ता में तो नहीं जी रहा है? अज्ञानता का जीवन पशुत्व का जीवन है। चमत्कारों में फँसकर चारित्र के चमत्कार को समाप्त नहीं करना चाहिए। पर को प्रभावित करना व पर से प्रभावित होना व आडम्बर से, कृति से प्रभावित करना ये विज्ञ की क्रियाएँ नहीं हैं। मूढ़ता यानी मूर्खता। अदेव व कुदेव में सुदेव-बुद्धि, कुशास्त्र में शास्त्रबुद्धि, कुगुरु में सुगुरूदृष्टि, अधर्म में धर्मबुद्धि, अतत्त्व में तत्त्वबुद्धि जिसकी है, वह मूढ़ है। अज्ञानी मोहीजीव सद्स्वरूप को नहीं समझता, पवित्र मानव पर्याय को मूढ़ताओं में नष्ट कर देता है। वीतराग मार्ग को छोड़कर कोई भी मार्ग मोक्षमार्ग नहीं है। सरागी की उपासना वीतरागी की तरह करना, करवाना, अनुमोदना करना, पर को अपने सुख-दु:ख का कर्ता मानना, स्व को पर का कर्ता मानना, सबसे बड़ी मूढ़ता है। कर्तृत्व-भाव का अभाव हो जाए तो मूढ़ता स्वयमेव पलायन कर जाएगी। सराग की उपासना का मुख्य कारण है मिथ्यात्व। कर्मों से पीड़ित प्राणी इतना दु:खी हो जाता है कि उसे सहन नहीं होता, तो वह दूसरे के माध्यम से सुखी होने की अपेक्षा रखता है। लोभी, वंचक, स्वार्थी अनेक जीव हैं। जैसे आटे का लोभ दिखाकर मछुआरा मछली को कांटे में फँसाकर उसके प्राणों का हरण कर लेता है और उदरपूर्ति करता है, उसी प्रकार से कलिकाल की कृपा से वे पाखण्डी, दु:खिया को देखकर मिथ्यात्व के कांटे में फँसाकर, सम्यक्त्वरूपी प्राणों को छीनकर, दु:खिया के पास जो कुछ धनादि था, उसे भी छीनकर अपनी आजीविका चलाते हैं। ऐसे अज्ञानी, मन्त्र-तन्त्र, ज्योतिषविद्या वाले अल्पज्ञों से बचकर रहना चाहिए। यदि कोई कर्मोदय चल रहा है, तो उसे शान्ति से सहन करते हुए पंचपरमेष्ठी की आराधना करना चाहिए। प्रबल कर्म-शत्रु भी जिनभक्ति से भयभीत होकर भाग जाते हैं। जैसे मयूर की आवाज सुनकर चन्दन के वृक्ष से लिपटे भुजंग/सर्प अपने आप चन्दन वृक्ष छोड़ देते हैं। बस दृढ़ आस्था होना चाहिए। जिसकी आयु पूर्ण हो चुकी है, उसे तीर्थंकर भगवान्, इन्द्र, नरेन्द्र, चक्री, हरिहर, ब्रह्मा, महेश्वर भी नहीं बचा सकते। सत् स्वरूप को समझ। क्यों मूढ़ता में जीता है? जादू टोना क्या कर सकते हैं? इनसे प्रभावित मत हो जाना। असाता के द्रव्य को साता में बदलने का उपाय वीतराग मार्ग की शरण है। अन्य कोई उपाय नहीं है। कर्मसिद्धांत को समझ। तूने जो शुभाशुभ कर्म किए हैं, उनको कौन परिवर्तित करेगा? स्वयं ही कर सकता है, अन्य कोई देवी देवता की उपासना नहीं। यदि तू कहे कि देवी आदि की पूजा करनेवाले सुखी देखे जाते हैं। अरे मूढ़! ध्यान रख, वे देवी-पूजा से सुखी नहीं हैं, पूर्व उपार्जित पुण्य से सुखी हैं। जो पूर्व में सद्मार्ग का आश्रय लिया था उसके प्रभाव से सुखी हैं। क्या देवी-उपासना करनेवाले दु:खी नहीं हैं? सर्वाधिक देवी-उपासना निम्न लोग करते हैं। वे आज तक श्रेष्ठ क्यों नहीं बने? मिथ्यात्व, असंयम इत्यादि के कारण वे आज दु:खी हैं। उसी की आराधना करके पुन: सुखी बनना चाहता है, कैसे संभव है? ध्यान रख! यदि जिनशासन-रक्षक यक्ष, यक्षिणी, पद्मावती, क्षेत्रपाल इत्यादि को भी यदि कोई वीतराग अरहन्तदेव जैसे मानकर उपासना करता है, उनसे दु:ख-सुख की कल्पना करता है, तो वह भी मूढ़ता में जी रहा है। सम्यक्त्व से युक्त देव आदर सम्मान का पात्र है, सम्मान होना चाहिए, पर जिन-देव नहीं मानना चाहिए। यथायोग्य जो जैसा है उसे वैसा मानना चाहिए। सर्व पदार्थों में मूढ़ता से रहित परिणति अमूढ़दृष्टिपना है। जिन देव, जिनवाणी, निर्ग्रन्थ गुरु, निजआत्मदेव का श्रद्धान कर, यदि तू सत्य शिवसुख की आकांक्षा रखता है तो।

दुनियाँ में सब कुछ भूल जाना लेकिन गुरु को कभी मत भूलना गुरुपूर्णिमा

प्रवचन- प.पू. राष्ट्रसंत, गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज

बन्धुओ! आज आप सभी बड़े मनोयोग से गुरु भक्ति में संलग्न हे। विभिन्न प्रकार से स्तुति, भक्ति, पूजन कर गुरु पूर्णिमा मना रहे हैं लेकिन गुरु पूर्णिमा का अर्थ मात्र यह नहीं कि आपने पूजन, भक्ति कर ली और गुरु ने आपको आशीर्वाद दे दिया। गुरु पूर्णिमा का अर्थ तो शिष्य को सही मार्ग बतलाना है।

बन्धुओ! गुरु पूर्णिमा का इतिहास गौतम गणधर से जुड़ा हुआ है। जब भगवान महावीर स्वामी को केवलज्ञान हुआ और देवराज इन्द्र की आज्ञा से कुवेर ने समवशरण की रचना की आत्म पिपासु, धर्म पिपासु जन भगवान के उपदेश सुनने हेतु एकत्रित भी हो गये लेकिन भगवान की दिव्य देशना नहीं खिर सकी। समय पूरा हुआ लोग अपने-अपने स्थान पर वापिस चले गये। दूसरे दिन पुन: उसी उमंग को लेकर सभी उपस्थित हुए कि आज तो भगवान की दिव्य देशना सुनने मिलेगी दो,तीन चार आदि दिन निकलते गये। यदि उस समय आप लोग होते तो फोन से पूछते आज प्रवचन होगा कि नहीं लेकिन अच्छा था वहाँ ऐसे श्रावक नहीं थे, न उस समय मोबाइल चलते थे। ६४ दिन निकल गये भगवान की दिव्य देशना नहीं खिरी। बन्धुओ! भक्ति जब अंतर आत्मा से जगती है तो भक्त को न समय दिखता है न दिन ही दिखते हैं। श्रद्धालु की तो निरंतर यही भावना रहती है आज नहीं तो कल जरूर भगवान का उपदेश मिलेगा अवश्य मिलेगा।

६५वाँ दिन आया अब तो सौधर्मेन्द्र घबरा गया। व्यक्ति आयोजना कर और उसमें सफलता न मिले तो बड़ा दुख होता है। आप लोग तो पूछ लेते हैं महाराज आज प्रवचन क्यों नहीं हुआ लेकिन भगवान से क्या पूछा जाये, वे तो कोई उतर ही नहीं देंगे और जब तक दिव्य देशना नहीं खिरेगी तब तक संसारी प्राणियों को मोक्ष का मार्ग कौन दिखायेगा, उनका कल्याण कैसे होगा यह सोचते ही सौधर्म इन्द्र ने अपने अवधि ज्ञान से दिव्य ध्वनि न खिरने का कारण ज्ञात किया। तब उसे पता चला कि इतने बड़े समूह में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो भगवान की दिव्य ध्वनि को झेलने की योग्यता रखता हो, हाँ यदि ऐसा कोई है तो वह गौतम गोत्री इन्द्रभूति नाम के ऋषि है वे ही इतने विद्वान है इतने ज्ञानी है। लेकिन उन्हें लाया कैसे जाये उनके ५०० शिष्य है इतना ही नहीं उनके दो भाई और उनके साथ आश्रम में रहते हैं उनके भी ५००-५०० शिष्य है उनका भी ज्येष्ठत्व इन्द्रभूति को प्राप्त है उसे लाना बड़ी कठिन बात है। क्या किया जाये, कौनसा उपाय निकालूँ जिसे वह अभिमानी इन्द्रभूति गौतम भगवान महावीर स्वामी के समक्ष आ सके।

बन्धुओ! सौधर्म इन्द्र अपार शक्ति शाली होता है यदि वह चाहता तो इन्द्रभूति गौतम को उठाकर भी विद्या से ला सकता था किन्तु वह न्याय पटु था उसने तुरन्त अपना रूप बदला और एक वृद्ध का रूप बना लिया। इतने वृद्ध दादा का रूप बनाया जो बिना लाठी के चल भी नहीं पा रहे थे, कमर पूरी झुकी हुई थी। मुख में एक भी दांत नहीं थे। आँखें अंदर घुसी हुई थी। शरीर की झुर्रियां तो उनकी उम्र की शिक्षा दे रही थी। वे वृद्ध दादा लाठी टेकते हुए आश्रम में प्रवेश करते हैं। बाहर से ही आवाज लगाना प्रारंभ करते हैं गौतम! गौतम! आश्रम के विद्यार्थियों ने जैसे ही ये शब्द सुने वे दौड़कर आये। पूछा बाबा जी आप किसे बुला रहे हैं। मैं इन्द्रभूति गौतम से मिलना चाहता हूँ। मुझे सहारा देकर वहाँ पहुँचा दीजिए।

बन्धुओ! वे सुसंस्कारित विद्यार्थी थे, उन्होंने उन वृद्ध का हाथ पकड़ा और कहा आइए-आइए यहाँ आइए। किसी शिष्य ने इन्द्रभूति गौतम से जाकर कहा- एक अत्यंत वयोवृद्ध दादा जी हैं वे आपसे मिलना चाहते हैं। इन्द्रभूति ने कहा- आने दीजिए। वे वृद्ध दादा इन्द्रभूति गौतम ऋषि के कक्ष में प्रवेश करते हैं। इन्द्रभूति ने पूछा- आप कौन हैं आपके आने का कारण क्या है ? वृद्ध ने कहा- अच्छा तो आप ही इन्द्रभूति गौतम हैं। हाँ-हाँ मैं ही हूँ, कहिये आप कैसे आये ? मेरे गुरु ने एक सबक दिया था उसे मैं भूल गया हूँ। अब मुझे डर है कि पुन: जाकर मैं क्या सुनाऊँगा मुझे निरुत्तर रहना पड़ेगा। गुरु के द्वारा दिये सबक को याद करना विद्यार्थियों का कर्त्तव्य है और मैं उसे नहीं सुना सका तो मेरा शिष्य होना व्यर्थ है। अत:

मैं आपके पास उस सबक को पूछने आया हूँ आप उसका अर्थ मुझे समझा दीजिए ताकि मैं उसे याद कर सकूँ। इन्द्रभूति क्या है वह सवक? वृद्ध ने सुनाना प्रारंभ किया-

त्रैकाल्यं द्रव्यष्टकं, नवपद सहितें जीव षट्काय लेश्याः,
पञ्चान्ये चास्तिकाया, व्रत-समिति-गति ज्ञान चारित्र भेदाः।
इन्येतन्मोक्षमूलं, त्रिभुवन महितैः प्राक्तमर्हद् भिरीर्शेः,
प्रत्येति-श्रद्दधाति, स्पृशति च मतिभान यः स वै शुद्ध दृष्टिः।।

पूरा श्लोक उन्होंने सुना दिया। इन्द्रभूति उसके अर्थ के विषय में सोचता है तीन काल भूत, भविष्य, वर्तमान है लेकिन द्रव्य षटकं छह द्रव्य, नव पदार्थ यह सब क्या है मैने तो १८ पुराण कण्ठस्थ किय हैं। चारों वेद भी मुझे याद हैं उनमें तो कहीं भी यह बात मुझे देखने पढ़ने में नहीं आई आखिर में यह बात आई कहाँ से कौन सा ऐसा शास्त्र रह गया जो अभी तक मैंने पढ़ा न हो। सभी शास्त्रों का मैंने अध्ययन किया है फिर ये बाते कहाँ रह गई, कौन ऐसा गुरु है जो मुझसे भी विद्वान है जिसने ऐसे पाठ पढ़ाये हैं। मैं तो आज तक यही सोच रहा था कि दुनियाँ में मैं ही सबसे विद्वान हूँ मुझसे बड़ा ज्ञानी इस संसार में है ही नहीं।

आप लोग गुरु भक्ति कर रहे थे और मैं सोच रहा था कि मुझसे बड़े-बड़े इतने सारे ज्ञानी, त्यागी तपस्वी संत इस जगत में हो चुके हैं हम लोग तो पानी की एक बूँद के बराबर भी नहीं हैं। बन्धुओ! लघुता से प्रभुता मिले अपने जीवन में जितनी लघुता होती है वह व्यक्ति उतना ही उठता है।

इन्द्रभूति गौतम को उस श्लोक का अर्थ करना नहीं आया लेकिन अब कहूँ कैसे? उसने तरीका निकाला बोला- कौन तुम्हारा गुरु है कि इतने वृद्ध व्यक्ति को इतना कठिन सबक याद करने दिया, क्या वहाँ ऐसे ही कठिन पाठ पढ़ये जाते हैं। हाँ, हमारे गुरुदेव इतने कठिन पाठ ही पढ़ाते हैं। इन्द्रभूति ने कहा- चलो कहाँ तुम्हारे गुरु हैं इसका उत्तर मैं तुम्हें नहीं तुम्हारे गुरु को ही दूँगा। सौधर्म इन्द्र तो यही चाहता था कि कैसे भी करके ये भगवान के पास पहुँचे और भगवान की दिव्यध्वनि खिरे।

बन्धुओ! यह बात इतनी जल्दी आश्रम में फैल गई, जिसे सुन इन्द्रभूति के दोनों भाई साथ चलने के लिए तैयार हो गये सभी के ५००-५०० शिष्य भी साथ चले, पीछे १५०३ लोगों का पूरा जुलूस चल रहा था आगे-आगे वह वृद्ध लाठी टेक-टेककर चल रहा था। अब तो उस वृद्ध की शक्ति ही अलग दिख रही थी पहले जो एक कदम भी नहीं चल पा रहा था अब तो वह दौड़-दौड़कर चल रहा था। आइए-आइए इधर है मेरे गुरु का आश्रम और चलते-चलते दूर से ही समवशरण का दिव्य प्रकाश दिखने लगा जिसे देख इन्द्रभूति सोचने लगा अरे यह क्या है ऐसा दृश्य तो मैंने पहले कभी नहीं देखा। अरे! जो शिष्यों को इतना क्लिष्ट विषय पढ़ाते है वे स्वयं कितने विद्वान होंगे? मैं उनके एक श्लोक का अर्थ नहीं कर सका तो उन्हें क्या समझाऊँगा? इतने में सामने से मानस्तंभ दिखने लगा। मानस्तंभ का अर्थ है जो अभिमान को गला देता है। परिणामों में परिवर्तन लाता है, उस सीमा में पहुंचते पहुंचते उनके भावों में काफी निर्मलता आ गई।

बन्धुओ! हर व्यक्ति के शरीर से आभा निकलती है जिसे आज के समय में ओश कहते हैं वह अपनी सीमा के क्षेत्र को प्रभावित करती है विज्ञान भी इस बात को स्वीकार करता है। भगवान महावीर स्वामी जंगलों में साधना करते थे उनके पास गाय, शेर एक घाट पर पानी पीते थे। मर्यादा पुरुषोत्तम राम जिस क्षेत्र से गुजरते थे वहाँ साँप-नेवला आदि एक साथ बैठ जाते थे हिरण आदि निर्भीकता से पास में विचरण करने लगते थे। हमारे देश के नेहरू जी, लालबहादुर शास्त्री जी हुए जिनके विषय में उल्लेख है वे जब भी अपने बगीचे में जाते थे तो कबूतर उनके पूरे शरीर पर आकर बैठ जाते थे। आज भी ऐसे अनेक उदारहण है जहाँ प्राणी अपने वैर को भूल जाते है। गाय ने अनेकों प्राणियों को दूध पिलाकर उनकी रक्षा की।

बन्धुओ! इन्द्रभूति को जैसे ही मानस्तंभ का साक्षात्कार हुआ वैसे ही उनका मान गलन होने लगा वे सोचने लगे अरे! मैं क्यों इतना अभिमान कर रहा हूँ। मैं उन्हें समझाने नहीं, समझने जाऊँगा, मैं उनका शिष्य बनूँगा उनसे पढूँगा मैं

अभिमान नहीं करूँगा लघुता लाऊँगा।

बन्धुओ! यदि आप बड़ा बनना चाहते हैं तो लघुता लाइए लघुता सबसे बड़ा गुण है। दूसरे को अपना बनाने के पूर्व आप दूसरे के बन जाइए। आप दूसरों की सहायता करोगे तो दूसरा भी आपके सहयोग के लिए तैयार रहेगा। यदि आपने किसी को भोजन कराया है किसी के लिए पानी पिलाया है तो आपको कभी भूखा नहीं रहना पड़ेगा। आपके लिए भोजन की थाली, पानी का गिलास हमेशा हाथों पर मिलेगा। लोग इंतजारी करेंगे कि भैया कम से कम हमारे यहाँ पानी तो पी लीजिए। धर्म एक सटीक सिद्धान्त है यहाँ कहा गया है कि हम किसी की भलाई करते हैं तो उसका फल हमें भलाई के रूप में ही मिलता है।

जैसे हम बाल को जमीन पर मारते है तो वह पुन: हमारे पास लौटकर आती है वैसे ही पुण्य और धर्म का सिद्धान्त है। भगवान महावीर स्वामी कहते हैं तुम एक बार पानी पिलाओंगे दुनियाँ दस बार पानी पिलायेगी। तुम एक बार किसी को भोजन दोगे दुनियाँ हमेशा तुम्हें भोजन कराने तत्पर रहेगी। एक बार तुम दिल से किसी को अपना मानलो वह अपना जीवन न्यौछावर कर देगा।

गुरु पूर्णिमा का अर्थ यही है। गुरु के लिए व्यक्ति समग्र जीवन न्यौछावर करने तत्पर रहता है। आप देखिए आपके सामने ये संत विराजमान है जब ये घर में थे तो कितने बार भोजन करते थे गिनती नहीं है। कितनी बार पानी पीते थे। इसकी भी कोई गिनती नहीं है जब जो मिला तब वही ओम स्वाह: हो जाता था। छोटे-छोटे महाराज, माता जी, छोटी-छोटी बहिने भैया यहाँ बैठे हैं अब ये सभी एक टाईम भोजन पर निर्भर है इनसे पूछो आपने ऐसा क्यों किया? तो यही कहेंगे कि हमें धर्म की परिभाषा समझ में आ गई है। वह हृदय तक पहुँची है।

मैं बतला रहा था इन्द्रभूति गौतम आगे बड़े और उन्होंने समवशरण में विराजमान तीर्थंकर महावीर प्रभु को जैसे ही देखा तो उन्हें सम्यक्त्व के साथ-साथ वैराग्य हो गया। भगवान के दर्शन कर उन्होंने दीक्षा ग्रहण की।

बन्धुओ! इस विषय में दो उल्लेख मिलते है एक तो पहले उन्होंने ६० हजार प्रश्न किये फिर उन्हें वैराग्य हुआ। और दूसरा यह कि ६० हजार प्रश्नों की तो वहाँ बात ही नहीं है भगवान को देखते ही उन्हें वैराग्य हो गया और उनके साथ-साथ उनके भाई और सभी शिष्यों को भी वैराग्य हो गया। १५०३ गुरु शिष्य सभी भगवान के समीप दीक्षा धारण कर निर्ग्रन्थ मुनि बन जाते है। दीक्षा लेकर इन्द्रभूति मुनिराज जैसे ही ध्यान में बैठते हैं तो उनकी आत्म विशुद्धि बढ़ती है और इतनी बढ़ती है कि उन्हें चौथा मन: पर्याय ज्ञान उत्पन्न हो गया और वे गणधर पद को प्राप्त हो गये।

आप सभी भी जब इन त्याग वैराग्य की मूर्ति संतों के दर्शन करते हैं तो परिणामों में निर्मलता आती है। इनके त्याग तपस्या के परिवेश में आने से आम व्यक्ति के भी कुछ न कुछ मात्रा में त्याग के भाव जाग्रत हो जाते हैं। जब तक आप संतों से दूर रहते हैं उस समय के परिणाम और जब उनके चरणों में उनके करीब बैठते हैं उस समय की बात ही अलग होती है। किसी ने कहा भी है-

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी से भी आध।
तुलसी संगत साधु की, कटे कोटि अपराध।।

गौतम गणधर को ऋद्धियाँ और चौथा ज्ञान होते ही भगवान महावीर स्वामी की दिव्य देशना खिरने लगती है।

बन्धुओ! आज के दिन गौतम गणधर को भगवान महावीर स्वामी जैसे गुरु मिल और हम सभी को गौतम गणधर जैसे गुरु मिले थे। जिनके प्रसाद से भगवान की दिव्यध्वनि खिरी। बन्धुओ! आज का दिन गुरू पूर्णिमा का है क्योंकि आज मात्र गुरुओं का समागम हुआ था और कल का आनेवाला जो दिन है श्रावण कृ.एकम के दिन अर्थात् ६६वें दिन तीर्थंकर महावीर स्वामी की प्रथम दिव्य देशना खिरी इसलिए वह दिन वीर शासन जयंति के नाम से विख्यात हुआ।

भगवान महावीर स्वामी और गौतम गणधर यही कहते हैं कि दुनियाँ में सब कुछ भूल जाओ लेकिन अपने गुरु को कभी नहीं भूलना। आज की दुनियाँ बड़ी विचित्र है। व्यक्ति थोड़ी सी ऊँचाई प्राप्त करता है तो गुरु को भूल जाता है। थोड़ी

सी उपलब्धि पाता है गुरु को भूल जाता है। थोड़ी संकट विपत्ति आये, अनुकूलता न मिल तो गुरु को भूल जाता है। जबकि शास्त्र कहते हैं- 'न ही कृतमुपराका: साधव: विस्मरन्ति' दुनियाँ भूल सकती है लेकिन साधुजन गुरु के उपकार को कभी नहीं भूलते। वे सदैव उपकारों का स्मरण करते रहते हैं।

पूज्य आचार्य कुन्दकुन्द देव अपने रयणसार ग्रंथ में लिखते हैं-

पतिभत्ति विहीन सदी भिच्चो जिणसमयभत्तिहीण जण्णो।
गुरुभत्तिहीण सिस्सो दुग्गदिमग्गाणुलग्गओ णियदं।।७७।।

पत्नि का कर्तव्य यही है कि वह अपने पति को परमेश्वर की तरह माने लेकिन यदि वह पति भक्ति से रहित है तो पत्नि कहलाने की अधिकारी नहीं है। यदि कोई साधु जिनेन्द्र की भक्ति से धर्म की भक्ति शास्त्र की भक्ति से रहित है तो उसे साधु नहीं माना गया वैसे ही यदि कोई शिष्य हो और वह गुरुभक्ति से रहित हो तो वह दुर्गति के मार्ग पर लगा समझना चाहिए। उसकी साधना, त्याग, ज्ञान सभी निरर्थक हो जाता है। इसलिए हमें चाहिए कि हम दुनियाँ में सब कुछ छोड़ दे, भूल जाये लेकिन गुरु को कभी न भूले।

हम एकलव्य की तरह बने एकलव्य ने मिट्टी के गुरु बनाये। एक मूर्ति को गुरु का सम्मान दिया। आज का व्यक्ति पहले सोचता है गुरु आशीर्वाद देंगे कि नहीं हमें कुछ मिलेगा कि नहीं मिलेगा। कभी सोचो कि एकलव्य के गुरु ने तो उसे आश्रम से भी बाहर निकाल दिया था लेकिन फिर भी उसकी गुरुभक्ति में अंतर नहीं आया।

हम सब इसी गुरुभक्ति को ध्यान में रखें, गुरु ने हमें रत्नत्रय देकर महान उपाकर किया है। हमने उनके लिए क्या किया?

आज मैं अपने उपकारी गुरुदेव परम पूज्य आचार्य विमलसागर जी और परम पूज्य आचार्य सन्मतिसागर जी महाराज को बार-बार याद करता हूँ। उनके श्री चरणों में बारम्बार श्रद्धा-भक्ति से नमोस्तु करता हूँ। और प्रार्थना करता हूँ कि जैसा आशीर्वाद आज तक आपने मुझे दिया वैसा ही सदैव देते रहना।

जब हम लोग का पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज क साथ उदगाँव में चातुर्मास हुआ तो विहार के अवसर पर मैंने कहा- गुरुदेव मुझे कुछ अच्छे सूत्र दे दीजिए। उस समय महाराज ने कहा- विरागसागर जी तुम्हें आज तक इतना ऊँचा उठाने वाली तुम्हारी गुरुभक्ति रही ही है और आगे भी यही गुरु भक्ति तुम्हें ऊचाईयाँ प्रदान करती रहेगी।

हमारे संघ के महाराज, माताजियों ने भी कहा- हमें भी कुछ सूत्र दीजिए तो भी उन्होंने कहा- तुम्हे भी अपने गुरु की भक्ति ही संबल देगी वही उन्नति करेगी।

बन्धुओ! आज तक मैंने जितने भी बड़े-बड़े आचार्य देखे वे अपार गुरुभक्त रहे। शिष्य हमेशा प्रार्थना करता है-

नजरो से गिराना न, चाहे जितनी सजा देना।
नजरो से जो गिर जाये, मुश्किल है सम्हलपाना।।

हे गुरुदेव मैं आपके बताये रास्ते पर हमेशा चलूँगा यदि कभी त्रुटि भी हो जाए तो जो चहो वह सजा दे देना लेकिन कभी नजरों से नहीं गिराना।

'प्रभु रूठे गुरु ठौर है गुरु रूठे नहीं ठौर'

यही कारण है कि गुरु को प्रभु से भी पहले नमस्कार किया है हम सभी अपने गुरु के प्रति अनन्य श्रद्धा भक्ति रखते हुए उने बतलाये पथ पर चले। सदैव उनके उपकारों का स्मरण करते रहे तभी हमारी गुरु पूर्णिमा सार्थक और सफल हो सकेगी।

।। जय बोलिए महावीर भगवान की जय।।

शराब व्यक्ति ही नहीं, परिवार को भी नष्ट करती है

प्रवचन- प.पू. राष्ट्रसंत, गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज

शराब एक ऐसा नशा है, जिसका सेवन करने वाला ऊँचे से ऊँचा व्यक्ति भी नालियों में पड़ा दिखता है और कुत्ते उसके मुख में गंदगी कर देते हैं क्या ऐसी अवस्था आपको पसंद है ? नहीं, तो फिर नशा करना छोड़ दीजिये।

नशा को जब हम उल्टा करते हैं तो शान बन जाता है। यदि आप शान से जीवन जीना चाहते हो तो नशा का त्याग करें। नशे की खातिर आज अनेकों परिवार बर्बाद हो गये, शराबी व्यक्तियों के पास कभी पैसा नहीं टिका, उनका परिवार कभी ऊँचा नहीं उठा, उनके बच्चे अच्छी तरह से नहीं पढ़ सके। उनका स्वयं का भी जीवन बर्बाद होता है और साथ ही घर-परिवार बालों की भी जिंदगी खराब हो जाती है।

आज जिस अहिंसा व्यसन मुक्ति, शाकाहार अभियान से आप सभी प्रभावित हो रहे हैं यह अभियान भी एक ऐसी ही दुखभरी घटना से प्रारंभ हुआ था। आज से २५ वर्ष पूर्व एक गरीब महिला अपने दुखी परिवार को लेकर मेरे पास आई, आँसू ढालते हुए उसने अपनी कहानी सुनाई उसने कहा- महाराज शराब ने मेरा परिवार वर्बाद कर दिया। आज से कुछ समय पूर्व मैं बहुत बड़ी जमीदार की बहू थी। असीम धन-दौलत हमारे पास थी किसी भी बात की कोई कमी नहीं थी, लेकिन गाँव में व्यसनी लोगों की संगति में बैठने के कारण मेरे पतिदेव में शराब पीने के संस्कार पढ़ने लगे। समय-समय पर सभी ने उन्हें मना भी किया लेकिन किसी की नहीं सुनी। जुआ में हारने के कारण घर का धन दाव पर लगाया जाने लगा। गहने, कीमती वर्तन यहाँ तक की जमीन भी दाव में हार गये। निरंतर शराब के नशे में रहने से घर के सुख-दुख की उन्हें कोई परवाह नहीं रहती थी। बच्चे तथा मैं रूखी-सूखी रोटी खाकर अपना पेट भर लेती थी लेकिन भाग्य को यह भी मंजूर नहीं था। एक दिन इनकी तबियत खराब हुई तो डॉक्टर ने केंसर बतला दिया। पैसा तो था नहीं अत: इलाज कराने के लिए घर को गिरवी रखना पड़ा। मैंने सोचा था बीमारी ठीक होने पर ये पुन: कमा लेंगे लेकिन मुझे क्या पता था बीमारी पैसे के साथ-साथ इन्हें भी ले जायेगी। केंसर अपनी लास्ट स्टेज पर पहुँच चुका है डॉक्टर ने जबाव दे दिया है अब हमारे पास न खाने के लिए कुछ है न रहने के लिए घर है रोड़ पर पड़े बच्चों को कोई भी उठाकर भगा देता है। ये छोटे बच्चे अभी कमाने लायक भी नहीं है इन्हें पढ़ाने की बात तो दूर खिलाने-पिलाने और तन पर कपड़े पहनाने के लिए भी मेरे पास पैसे नहीं है मैं क्या करूँ कहाँ जाऊँ कहते हुए वह जोर-जोर से रोने लगी।

उसकी वह करूणा कहानी सुन और उसके परिवार की दशा को देख मेरा हृदय भी करूणा से भर गया, मेरे पास और भी जो लोग बैठे थे उन्होंने जितना बना उस परिवार का सहयोग किया। उसी समय मैंने सोचा कि संसार में एक नहीं न जाने कितने परिवारों के ऐसी दशा होगी। अत: समाज और देश से ही दुखों के कारण भूत इन शराब आदि व्यसनों को हटाना चाहिए तभी से अनवरत चातुर्मास काल में यह अहिंसा व्यसन मुक्ति एवं शाकाहार अभियान चलाया जा रहा है। सन् २०१६ भिण्ड, चातुर्मास में वहाँ के कलेक्टर जी ने इसमें 'बेटी बचाओ और स्वच्छता अभियान' को जोड़ने की प्रार्थना की तभी से अहिंसा, व्यसन मुक्ति, शाकाहार, बेटी बचाओ एवं स्वच्छता ये पंचसूत्री अभियान प्रारंभ हुआ। दिल्ली अहिंसा स्थली से सम्मेद शिखर जी की और होने वाले विहार में इस अभियान को विशालपदयात्रा का रूप दिया गया। विगत २५ वर्षों में २५ लाख से अधिक तथा दिल्ली से अभी तक लगभग ५० हजार जनसमूह इस अभियान के प्रति संकल्पित हो चुके हैं साथ ही रास्ते में पड़ने वाले नगरों के १० केन्द्र व राज्यों के मंत्री, १० सांसद, २२ विधायक अनेक मेयर नगर पालिका अध्यक्ष तथा अनेकों पुलिस कर्मी लाभान्वित हुए।

कहने का तात्पर्य है शराब आदि व्यसन जीवन को वर्बाद करने वाले हैं आज शराब से होने वाले केंसर के कारण अनेकों लोग मरण को प्राप्त हो रहे हैं। अत: इस भव और पर भव को दुखों की कारण भूत इस शराब को सुख चाहने वाले पुरुष त्याग करें।

वेतन एनर्जी का

(प.पू. गुरुदेव द्वारा ली गई गोम्मटसार कर्मकाण्ड की क्लास से)

अनंत ज्ञान के लिए अनंत वीर्य (शक्ति) की आवश्यकता होती है।

शारीरिक मेहनत करने वाले से मानसिक मेहनत करने वालों की एनर्जी अधिक खर्च होती है। व्यक्ति १२ घण्टे शारीरिक परिश्रम करें और एक घण्टे मानसिक परिश्रम करें दोनों में बराबर एनर्जी का उपयोग होता है।

आपने देखे होंगे जितने भी शोध-खोज कर्ता साइंटिस्ट (वैज्ञानिक) होते हैं अक्सर दुबले पतले कमजोर से दिखते हैं क्योंकि मानसिक परिश्रम में उनकी एनर्जी खर्च हो जाती है।

बड़े-बड़े ग्रंथ, टीकाओं को लिखने वाले ज्ञानी आचार्यगण भी अधिकांशत: कमजोर होते हैं। मुझे लगता है आचार्य कुन्दकुन्द देव भी पूर्ण स्वस्थ्य नहीं होंगे उन्हें कोई न कोई रोग-बीमारी होगी अथवा कमजोरी महसूस होती होगी तभी तो वे भगवान से बोधि की प्राप्ति के साथ आरोग्य की प्रार्थना करते हैं। यह भी सत्य है कि रत्नत्रय की साधना के लिए शरीर की स्वस्थ्यता भी आवश्यक है क्योंकि रोगी शरीर से अधिक समय तक निर्दोष रत्नत्रय की साधना होना कठिन है।

आम जगत में भी वेतन एनर्जी का दिया जाता है। हम स्कूल में देखे चपरासी का वेतन कितना है १० हजार और परिश्रम १० घण्टे अनवरत रहता है। टीचर का वेतन ५० से ६० हजार, परिश्रम मात्र ४ घण्टे कुर्सी पर बैठकर पढ़ाना और प्रिंसिपल का वेतन १ लाख से ऊपर होता है और परिश्रम मात्र ऑफिस में बैठकर अटेन्डेन्स लगाना। देखने में ऐसा ही दिखता है लेकिन शारीरिक मेहनत से मानसिक मेहनत का प्रतिशत क्रमश बढ़ा हुआ है। यहाँ तक की प्रिंसिपल की सर्वाधिक मेहनत है उसे स्कूल के टीचर्स, बच्चों के साथ-साथ वहाँ होने वाले हर कार्य अकार्य का ध्यान रखना होता है यही कारण है उनका वेतन बढ़ा हुआ है।

दूसरा कारण शारीरिक मेहनत रूखी-सुखी रोटी खाकर भी की जा सकती है लेकिन मानसिक मेहनत के लिए ऐनर्जी पावर की आवश्यकता होती है तथा तदनुसार वेतन और सुविधाएँ भी वैसी ही दी जाती है ताकि वैलेन्स बना रहे।

शक्ति से अधिक मानसिक परिश्रम करने वाले व्यक्ति अधिक समय तक स्वस्थ नहीं रह पाते हैं यही कारण है कभी-कभी अधिक पढ़ने वाले लोगों को माइन्ड डिस्टर्व जैसी समस्याएँ देखने में आती है अत: हमारे तीर्थंकर भगवंतों द्वारा कही गई बात शब्दत: सत्य है कि अनंत ज्ञान के लिए अनंत वीर्य की जरूरत होती है।

गुरु चित्र : शिष्य दर्पण

गुरु एक चित्र तथा शिष्य एक दर्पणवत् होता है। शिष्य की परिचर्या से ही गुरु की परिचर्या का परिज्ञान करना आसान होता है। जिस तरह बच्चों से माता-पिता के व्यक्तित्व का परिज्ञान होता है। यदि शिष्य संस्कारित है तो अनुमान लगाया जा सकता है कि गुरु कैसे होंगे? क्योंकि शिष्य को संस्कार देने वाले गुरु ही होते हैं। गुरु स्वयं संस्कारित हैं इसलिये दूसरों को संस्कारित कर सकें। अन्यथा वे हमें संस्कारित नहीं कर पाते। पहले वे स्वयं ढले हैं, फिर हमें ढालने के प्रयास में सफल होते हैं। अत: वे हमारे परमोपकारी हितैषी हैं। वे हमें जैसी परिचर्या बताते हैं संस्कार देते हैं, उसी के अनुसार हमारी परिचर्या या अनुसरण होना चाहिये, क्योंकि गुरु का ज्ञान जीवन भर के अनुभवों से भरा होता है। उस अनुभव ज्ञान के बल पर वे हमें जो भी निर्देशन देते हैं वह हमारी उन्नति का सोपान बन जाता है, मोक्ष पथ पर चलने वाले पथिक के लिये पाथेय भूत होता है अत: सदैव गुरु आज्ञा में चलना चाहिये क्योंकि हमारी थोड़ी सी त्रुटि गुरु के सम्मान में क्षति पहुंचा सकती है। हम कृतघ्न नहीं कृतज्ञ हैं अत: कोई ऐसा कार्य न करें जिससे गुरु धर्म संघ या हमारे स्वाभिमान में ठोस लगे।

सामायोजित शिक्षाएँ के साभार से

गुरु एक रूप अनेक

श्रमण मुनि विनन्दसागर जी महाराज

जहाँ हमारे बीच पूज्य गुरुदेव के गुरुदेव गणाचार्य भगवन और आचार्य भगवन दोनों ही विराजमान हो वहाँ छोटा सा बालक कुछ कहूँ तो शोभा नहीं देता फिर भी प्रयास कर रहा हूँ। गुरु शब्द बड़ा महत्वपूर्ण है। आपके लिए गुरुदेव गुरु हैं लेकिन ये ही गुरु मेरे लिये प्रभु से भी बढ़कर हैं मैं उन्हें सदैव हृदय के सिंहासन पर बिठाकर रखता हूँ। गुरु ही हमें सन्मार्ग देते हैं गुरु ही रत्नत्रय प्रदान करते हैं कहा भी है-

त्वमेव मातां च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वम् मम देवदेव।।

गुरु एक दिखते है लेकिन उनके चेहरे अनेक हैं। गुरु जब फटकार कर सन्मार्ग पर लगाते हैं तो वे पिता का कर्तव्य निभाते हैं और जब गुरु प्यार से दुलारते हैं तो माँ की ममता प्रदान करते हैं तथा वे ही गुरु जब सल्लेखना समाधि मरण कराते हैं तो वो ही भगवान के तुल्य सर्वस्त हो जाते हैं।

मन समर्पित तन समर्पित
और ये जीवन समर्पित
और क्या दूँ आपको गुरुवर
जीवन का हर क्षण समर्पित।

गुरुदेव आपने हमें यह श्रमण जीवन दिया है। अच्छे संस्कार दिये हैं, संयम की नयी-नयी अनुभूति, जिनवाणी का नया रसपान कराया है लेकिन हम आपको कुछ नहीं दे पाते अत: यह संपूर्ण जीवन आपके चरणों में सदा-सदा के लिये अर्पित है।

गुण गुरु से ही मिलते हैं बाजार में नहीं।
इनका समर्पण से नाता है व्यापार से नहीं।।
गुरुवर दिखने में तो एक इच्छे इंसान हैं।
गौर से देखों इन्हें ये चलते-फिरते भगवान है।।
दीप जहाँ जलते हैं, रोशनी उगलते हैं
गुरु चरणों में आना, रत्न यहाँ मिलते है।।

अन्त में गुरुदेव के चरणों में नमोस्तु-३

निर्दोष

आ. श्री १०८ विशुद्धसागर जी

जो करता है
साहित्य का
चिन्तन-मनन,
रहता है
निर्ग्रन्थों की सेवा में
संलग्न।

गुणीजनों के मध्य
जो करता
तत्व विचार,
उसी भाग्यवान का
रहता है निर्दोष
आचार विचार।

भाव शुद्धि का प्रभाव

श्रमणी आर्यिका विशिष्टश्री माता जी

दुनियाँ में अनेक प्रकार की शक्तियाँ हैं उनमें एक भावना रूप शक्ति भी है धर्म क्षेत्र में उसकी प्रधानता है, क्योंकि उसी विशुद्ध भावना शक्ति से मंत्र-तंत्र की सिद्धि और मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है और बुरे भावों से संसार परिभ्रमण रूप दुख प्राप्त है। आत्मा में उठने वाली भावना रूप तरंगों का प्रभाव दुनियाँ के समस्त जड़ और चेतन पदार्थों पर पड़ता है यह सिद्धान्त जैन धर्म के अनुसार अनादि काल से चला आ रहा है। इस सिद्धान्त को आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया और अनेक प्रयोगों से सिद्ध भी किया है। जैसे कलूवेकिस्टर नाम के वैज्ञानिक ने पेड़ पौधों पर पड़ने वालो भावों के प्रभाव और सुख-दुखादि के संवेदन को ज्ञान करने के लिए पोलोग्राफी यंत्र बनाया और डेकूना मेसेजिनियम नाम के पौधे से गेल्वानो मीटर पोलोग्राफी यंत्र एवं कुंजी (Key) आदि लगाकर परिपथ पूर्ण किया। उन्होंने ऐसे तीन परिपथ पूर्ण किये और अलग-अलग तीन व्यक्तियों का एक-एक पर्ची देकर कहा इनमें जैसा लिखा है वैसे परिणामों से युक्त होकर कार्य करना है।

प्रथम व्यक्ति ने पर्ची में लिखे वाक्यानुसार पेड़ को कष्ट पहुँचाने के परिणाम करते हुए पत्ते आदि तोड़ना प्रारंभ किये और गेल्वानों मीटर की नीडिल से प्राप्त विक्षेप को नोट किया। दूसरे व्यक्ति ने पर्ची में लिखे संकेतानुसार पेड़ को पूर्णत: नष्ट करने के भाव करते हुए कार्य करना प्रारंभ किया और प्राप्त हुए। विक्षेपों को नोट किया। तीसरे व्यक्ति ने पर्ची में लिखे वाक्यानुसार पेड़ को खाद पानी आदि पहुंचाने के परिणामों से युक्त होकर कार्य प्रारंभ किया और प्राप्त हुए विक्षेपों को नोट किया। जब गेल्वानों मीटर से प्राप्त तीनों परिपर्थों की रीडिंग के अलग-अलग तीन ग्राफ खीचें तो पाया कि उन तीनों से भिन्नता है। जो सिद्ध करते हैं कि उन पर भी हमारी भावनाओं का प्रभाव पड़ता है और उनको सुख-दुख का संवेदन भी होता है।

हमारी भावनाओं का प्रभाव स्वयं के शरीर में स्थित ग्रंथियों पर भी पड़ता है। यदि हमारे भाव ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध एवं बदले आदि की भावना से युक्त रहते हैं, तो अमृत तुल्य किया गया भोजन जहर का कार्य करता है।

सर्वोदया/ रत्नत्रय वर्धिनी टीका

प.पू. आचार्य कुन्दकुन्द देव की महान कृतियाँ बारसाणुपेक्खा एवं रयणसार पर प.पू. राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज द्वारा अत्यन्त ही सरल एवं सहज संस्कृत भाषा में हिन्दी अनुवाद सहित अनुपम टीका जो आगम, अध्यात्म एवं सिद्धान्त की प्रमाणिकता से ओत प्रोत, क्रमश: शोध पूर्ण ग्रन्थ, ११०० पृष्ठीय सर्वोदया एवं १३०० पृष्ठीय रत्नत्रय वर्धिनी- दो दो भागों में भारतीय ज्ञान पीठ से प्रकाशित हो चुकी हैं। मंदिर जी, साधु-संघों तथा विद्वानों ने स्वाध्यायार्थ स्वपर ज्ञान वृद्धि हेतु सर्वोदया टीका ४९०/-रूपये प्रत्येक भाग एवं रत्नत्रय वर्धिनी टीका ६५०/- प्रत्येक भाग के मूल्य पर विक्रय हेतु उपलब्ध है-

प्राप्ति स्थान- १. **भारतीय ज्ञान पीठ (विक्रय केन्द्र)**
४४०५/५ अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली
फोन नं. ९१-०११-२३२४१६१९

२. **श्री सम्यग्ज्ञान विराग विद्यापीठ**
चैत्यालय मंदिर बतासा बाजार, भिण्ड (म.प्र.)
सं.सूत्र पं. वीरेन्द्र जैन, भिण्ड मो.९७५४८०३२२०

३. **श्री दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र विरागोदय धर्मधाम,**
पथरिया, जिला- दमोह (म.प्र.)
सं. सूत्र कपिल सिंघई पथरिया, मो. ९८९३७५३२२३

भाग्य और लक्ष्मी

श्रमणी आर्यिका वियोजनाश्री माता जी

एक बार देवताओं की सभा में भाग्य और लक्ष्मी का अचानक मिलन हो गया। दोनों अपनी-अपनी प्रशंसा के फल बांधने गले। लम्बा समय बीत गया पर किसी ने भी विराम नहीं लिया। तब देवताओं ने कहाँ आप लोग अपना चमत्कार दिखाए। तब तो पता लग जायेगा कि कौन अधिक सुदक्ष और समर्थ है। देवताओं ने यह भी शर्त लगाई कि अपने दो बार के प्रयोग से ही कुछ कर दिखना है, किसी को भी तीसरा अवसर नहीं मिलेगा। दोनों ने शर्त मंजूर कर ली।

सभी देव अपने रूप बदल कर मनुष्य लोक में उतर आये। लक्ष्मी औरत थी। अपने चंचल स्वभाव के कारण पहले चमत्कार दिखाने के लिये वह उद्यत हुई। उसने एक गरीब कृशकाय आदमी को एक सोने की ईट देकर कहा- तुम घर जाओ और धन से आनन्द मौज के साथ जीवन व्यतीत करो। अब तुम्हारे किसी तरह की कमी नहीं रहेगी। देखो, कल तरह-तरह के आभूषणों से आभूषित होकर यहाँ आना, जिससे इन्हें पता लगे कि मैं कितनी सामर्थ्यवान हूँ।

सोने की ईट पाकर वह आदमी बहुत प्रसन्न हुआ। उसकी आशाएँ आकाश को छूने लगी और खुशियाँ सागर बनकर लहराने लगी। घर पहुँच कर उसने ईट को छिपाकर रख दिया। कुछ समय बाद उसे घर के बाहर जाना पड़ा। ईंट को छिपाते समय उसकी पडोसन ने देख लिया था, अत: वह उसके घर में आयी और चतुराई के साथ ईंट चुरा ले गई।

दूसरे दिन वह आदमी जब उसी दीन अवस्था में फटेहाल सामने आया तो लक्ष्मी ने उसे तीखी नजरों से देखा। उसने जब अपना वृतान्त सुनाया तो वह कुपित भी हुई। पर फिर उसको एक रत्न देते हुए लक्ष्मी ने कहा- अब इसे संभाल कर रखना तुम्हारी सभी उलझने सुलझ जायेगी।

वह आदमी रत्न लेकर घर जा रहा था। रास्ते में एक नदी पड़ती थी। उसने सोचा, चलो स्नान तो कर लें। रत्न को एक कपड़े में लपेट कर कमर में बाँध लिया और स्नान करने लगा। वह गहरे जल में डुबकिया लगाकर स्नान का आनन्द ले रहा था तथा जोर-जोर से शरीर मल रहा था। उसे ध्यान ही नहीं रहा। कब उसकी कमर से रत्न की पोटली खुलकर पानी में गुम हो गई है।

स्नान कर वह जब बाहर आया तो उसे रत्न की गठरी दिखाई नहीं दी। वह अजीब उलझन में पड़ गया। रत्न गुम हो जाने से उसका होश भी गुम हो गया। आँखों में आगे अन्धेरा छा गया। उसने सोचा, मेरा भाग्य ही फूटा हुआ है। वह बहुत ही खिन्न मन से घर पहुंचा।

तीसरे दिन भी जब वह उसी दशा में लक्ष्मी के सामने आया तो भाग्य ने लक्ष्मी की हँसी करते हुए ताली पीट दी और कहा- बड़ी लम्बी-चौड़ी डींग मारती थी, दो बार में कुछ भी नहीं कर सकीं, तुम्हारे पास कोई करिश्मा नहीं। तुम उसकी दरिद्रता मिटाकर धनवान नहीं बना सकीं, अब देखो मेरी करामत, मैं इसे आज ही धनवान बना देता हूँ। विद्या पौरूष काम नहीं करते सब जगह भाग्य ही फलता है। भाग्य के कारण शिव के गले में लिपटे रहने वाले साँप को भी भरपूर खाना मिल जाता है। यों कहते हुये भाग्यदेव ने उस आदमी के ललाट पर अपने हाथ से तिलक लगाया और कहा जाओ, आज से तुम्हारा भाग्य खिल उठेगा।

नाना सपने देखता हुआ वह आदमी वहाँ से रवाना हुआ। जब वह अपने घर पहुँचा तो अपने मकान पर आया हुआ एक अतिथि मिला। आगन्तुक अतिथि मांसाहारी था, इसलिये उसने बाजार से मछली मंगाई। मछली जब काटी गई तो उसके पेट में वहीं रत्न की पोटली निकल आयी। गरीब के हर्ष का पार न रहा। उछलता हुआ वह पत्नी के पास आया और बोला- अपने सौभाग्य से गुम हुआ रत्न मिल गया है, अब सोने की ईंट की खोज करनी है देवी लक्ष्मी ने मुझे एक सोने की ईंट भी दी थी। मैं कहता हूँ, देवी की ईंट जो चुराकर ले गया है, उसके घर बीमारी फैल जायेगी और मौत डेरा डाल देगी।

घर की दीवार के पीछे से पडोसन ने वह बात सुनी तो वह घबराई। उसने तुरन्त सोने की चमचमाती हुई ईंट उसके

आगे ला रखी तथा नम्रता पूर्वक कहने लगी- सोना देखकर मेरे मन पर शैतान हावी हो गया था, मैं चोरी का जघन्य कुकर्म कर बैठी थी, तुम किसी से यह मत कहना। मैं अपने अपराध के लिये क्षमा मांगती हूँ। आदमी ने सहज ही क्षमा कर दिया क्योंकि उसको सारा धन वापस मिल गया था। उसकी रंगीली आशाएँ नृत्य करने लगी थी, हर्ष का सागर सीमा तोड रहा था।

दूसरे ही दिन वह नौकर चाकरों से परिवृत बहुमूल्य वस्त्र आभूषणों से अलंकृत अश्व पर सवार होकर भाग्य और लक्ष्मी के पास पहुँचा। भाग्य के चरणों में गिरकर गुणोत्कीर्तन करते हुये कहने लगा- जगत में आप ही सबसे महान है। जहाँ आप है, वहाँ सब कुछ है- वहाँ पत्थर में भी प्राण है, श्मशान में भी भगवान है, विनाश में चिर विकास है और धूल में भी फूल है। आपके बिना कुछ भी नहीं हैं। उसने लक्ष्मी को भी नमस्कार किया और कहा- आपने भी मेरे ऊपर करूणा की भी, किन्तु भाग्य के बिना आप टिकती नहीं भाग्य के बिना आप मिलती भी नहीं। आप तो भाग्य के पीछे ही है। आदमी भाग्य से राज्य पाता है और उसी से अक्षय धन तथा यश की प्राप्ति होती है, पूज्य गुरुवर ने बताया की भाग्य का निर्माण धर्म से ही होता है। अत: धन के पीछे नहीं धर्म के पीछे दौड़ों उसी से तुम्हारे यह लोक और परलोक दोनों सुखी हो सकेंगे।

ज्ञान का अभिमान नहीं

संकलन- आ. विदूषीश्री माता जी

एक बार की बात है कि एक राजा ने, दो पण्डितों को राजसभा में बुलाया और कहा कि- मैं तुम लोगों को सम्मानित करना चाहता हूँ, आप लोग स्नान वगैरह करके आयें, उसी समय राजा के मन में परीक्षा लेने का विचार आया और एक पंडित जी से कहा- पंडित जी, आप स्नान करके आयें राजा की आज्ञा पा एक पंडित जी स्नान करने चले गये, तब तक राजा दूसरे पंडित जी से बोले देखों, वे पंडित जी कितने विद्वान हैं। तब दूसरे पंडित जी ने कहा- अरे महाराज, वह तो बैल है। राजा को आश्चर्य होता है। उसी समय पहले पंडित जी स्नान वगैरह करके आ जाते हैं तभी राजा ने दूसरे पंडित जी से कहा कि- आप भी स्नान वगैरह करके आयें और पहले पंडित जी से बोले वे पंडित जी कितन विद्वान हैं। पहले पंडित जी कहते हैं कि वह तो गंधा है। राजा को लगा वास्तव में दोनों पंडित है लेकिन ज्ञान के अभिमान में हैं। इनको एक-दूसरे के ज्ञान की कीमत नहीं है, विनय नहीं है, अपने-अपने ज्ञान का गर्व है। राजा दोनों पण्डितों को अपनी भोजनशाला में भोजन कराने के लिये ले जाते हैं और एक के सामने घास तथा दूसरे के सामने भूसा डाल दिया तभी दोनों पंडित जी एक दूसरे की ओर देखने लगे कि, देखो राजा ने हमारा अपमान कर दिया। राजा ने कहा- पंडित जी आप लोगों के द्वारा ही आपका परिचय गधा, बैल के रूप में दिया गया था। मुझे तो पता नहीं था कि आप लोग यह सब खाते हैं क्योंकि आप लोगों के बोलने से ही आपका परिचय मिला है कि आप लोग क्या हैं ? इस प्रकार हमें एक-दूसरे के ज्ञान की तथा गुण की विनय करना चाहिये तभी हमें ज्ञान आ सकता है। क्योंकि अभिमान, ज्ञान को सम्यक् रूप प्रदान नहीं होने देता है। इसलिए ज्ञान का कभी अभिमान नहीं करना चाहिए।

प.पू. आचार्य रत्न, चर्या चूड़ामणी राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज ससंघ के परिचय फोटो एवं अन्य जानकारी हेतु-

1. **www.ganacharyaviragsagar.org.**
2. **www.ganacharyaviragsagarwixsite.com/viragsagarji**
3. **Facebook : viragvani**
4. **Email : viragsagarji@gmail.com**
5. **youtube : upsargvijetaguru virag**
6. **सं. सूत्र what'sapp no 9009462216**

कर्माधीनता में नहीं स्वाधीनता में है मोक्ष

आचार्य विनम्रसागर जी

जो भी प्राणी इस संसार में जी रहा है फिर वह चाहे कोई भी हो तिर्यंच हो संत हो या भगवंत भी क्यों न हो वह कर्माधीन अवश्य होगा कर्म से संसार है और कर्म में संसार भ्रमण है। धर्म एक ऐसी पवित्र वस्तु हैं जो पराधीनता को मिटाकर स्वाधीनता पैदा कर देती है यदि संसार में धर्म का अस्तित्व न होता तो कोई भी पवित्र न होता 'धर्म का इत्र ही जीवन को पवित्र बनाता है' धर्म के इत्र की सुगंध जब फैलती है तब सारा जीवन महकता है उस जीवन के परिवेश में सभी लोग घुलना चाहते हैं धर्मी के पास बैठकर सभी सुगंधित होना चाहते हैं। हम कर्म करते रहेंगे और कर्म के बहाव में बहते रहेंगे तो निर्वाण भूमि पर कदम रखना असंभव हो जाएगा। कर्माधीनता के बंधन को जानकर उसे तोड़ने का पुरुषार्थ करेंगे बाहर की इन्द्रियों के विषयों से हटकर निज में विलीन होंगे तभी धर्म अद्घटित होगा। ये धर्म ही हमें स्वाधीनता ओर पराधीनता का बोध कराकर संसार से विमुक्त कराकर मोक्ष महल तक ले जायेगा। जिस दिन हम ४८ मिनिट तक बिना सोचते हुए निज में विलीन होने की क्षमता रखने से समर्थ हो जायेंगे उसी दिन मोक्ष हमें स्वत: ही हासिल हो जाएगा।

आत्मानुभव मोक्ष का मूलभूत बीज है जब बीज हमारे पास होता है तो वृक्ष भी लग सकता है और उसमें फल-फूल भी फल सकते हैं बीज के अभाव में ये सब कुछ होना असंभव है। कर्माधीन होने के कारण हमारी अंतरंग की शुद्धता, अशुद्धता में परिवर्तित हो गई है और जब हम धर्म के द्वारा अशुद्ध शरीर में शुद्धता पैदा कर लेंगे तो यह अशुद्ध शरीर ही शुद्ध परमाणु रूप में परिवर्तित हो जाएगा। शुद्धात्मा स्वयं को भी शुद्ध कर लेती है और शरीर के परमाणुओं को भी शुद्ध कर देती है ऐसी शक्ति सभी के अन्दर विद्यमान है। कर्माधीन व्यक्ति संसार का गुलाम है आत्मानुभवी व्यक्ति स्वतंत्रता सैनानी है। कुछ करना भव के बंधनों से मुक्त होना है। संसार से निर्बन्ध होना पुरुषार्थ ही नहीं महापुरुषार्थ है। 'कर्म में वाण हैं, स्वतन्त्रता में निर्वाण है।' वाण में संसार का निर्माण है इसलिए हम सभी सत्यज्ञान को प्राप्त करके सत्कर्म जीवन में लाएँ फिर निष्कर्म होते हुए निर्वाण को प्राप्त करें तभी मानव जीवन की सफलता है।

आँसू झलक आये

श्रमणी आर्यिका विसंयोजनाश्री माता जी

दिल्ली मेरठ की धरा को पवित्र करते हुए पूज्य गुरुदेव के चरण पुन: गाजियाबाद की ओर गतिमान थे। रास्ते में पड़ने वाले स्कूल, मंदिर, धर्मशाला आदि स्थानों के पदाधिकारीगण अपने-अपने स्थानों को रूकने अथवा चरणशरण से पवित्र करने की अववरत प्रार्थनारत थे। उनमें ही ऋषभांचल से संपूर्ण दिल्ली में मशहूर नारी माँ कोशल की भी प्रार्थना आई। कुछ लोगों ने बताया गुरुदेव यहाँ से तो कभी प्रार्थना नहीं आती और आपके संघ के लिए यहाँ से इतनी सशक्त प्रार्थना आई है तो निश्चित ही यह आपकी कठोर चर्या एवं अनुशासन का ही प्रभाव है। गुरुवर ने भी ऋषभांचल की प्रार्थना स्वीकार कर वहाँ संघ के रात्रि विश्राम की स्वीकृति प्रदान की।

१३.१.२०१८ की शाम को ऋषभांचल में संघ की भव्य आगवानी हुई। सभी मंदिरों के दर्शन के पश्चात् संघ प्रतिक्रमण हेतु एकत्रित हुआ। तभी माँ कौशल अपनी प्रार्थना को लेकर गुरुवर के पास पहुंची। उन्होंने कहा गुरुदेव आप जैसे संत को पाकर आज मेरा जीवन धन्य हो गया है। गुरूदेव विमलसागर जी महाराज के आप शिष्य है वे मेरे भी परम उपकारी गुरुदेव रहे हैं अतएव में आपको ऐसे नहीं जाने दूँगी मेरी आंतरिक भावना है आप यहाँ आहार करें तथा भगवान ऋषभदेव का निर्वाण लाडू भी आपके सानिध्य में चढ़े।

ऋषभांचल पर इतने बड़े संघ की आहार चर्या लोगों में आश्चर्य का विषय था फिर भी समय न होने के कारण गुरुवर ने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया लेकिन माँ कौशल ने तो वास्तव में ही माँ का रूप रख लिया था वे गुरूदेव से इतनी जुड़ चुकी थी कि 'ना' शब्द सुनते ही उनकी आंखोंमें आँसू भर आये कण्ठ अवरुद्ध हो गया। आगे बिना कुछ शब्द कहें ही वे वहाँ से चल दी। उनकी ऐसी हालत देख दयालु गुरुवर का हृदय भी पानी-पानी हो गया। उन्हें लगा जो प्राय: संतो के पास न जाते हों उनकी इतनी भावना बन जाये तो इसे ठुकराना नहीं चाहिए। अत: माँ कौशल को पुन: बुलवाकर पूज्य गुरुदेव ने ऋषभांचल में ही संघ के आहार चर्या की स्वीकृति प्रदान की। जिससे माँ कौशल के साथ-साथ सारी कमेटी को अपूर्व हर्ष हुआ।

जय वीतराग जय विराग

श्रमणी आर्यिका विजिज्ञासाश्री माता जी

बुन्देलखण्ड के प्रथमाचार्य की बुन्देली पूजन-

स्थापना

आठ विश्व की भर लई थरियां गुरु पूजन रतों करते।
पाप रतपाते, कष्ट मिटाते और दुखन रतों हरते।।
येई भावना भाकैं हमने पूजन थाल सजा लई।
गुरु विराग को आझवाहन कर भक्ति अपनी बतालई।।

ॐ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवर अत्र अवतर अवतर संवोषट आह्ववाननं अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ:ठ: स्थापनम् अत्रमम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(जल)

भर भर लुटियां ल्याओ भक्तो जल की ढ़ार कराओ।
वो जल भी बन जावे क्षमुत, जो जल चरण चढ़ाओ।।
गुरु भक्ति की लीला न्यारी, सब और वाकिफ ईसे।
मनचाहो काम बनत है ऊको जो करै पूजा भक्ति।।

ॐ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्पवामीति स्वाहा।

(चंदन)

चंदा की प्रतिमूरत गुरुवर चंदन ल्याओ चढ़ावे।
चंदा भी लगत है फीकौ जिन गुरुवर के आगे।।
चंदन सो जूड़ो हो जाते ऊँ जो चंदन चरण चढ़ावे।
आ गये हम तो गुरु चरणन में भक्ति अपनी बतावे।।

ॐ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्पवामीति स्वाहा।

(अक्षय)

क्षय हो जाते दु:ख अपारे जो अक्षत चरण चखते।
तनक मनक न होवें बल्कि ब्लात कष्ट नस जातें।।
ल्याये गुरु जी अक्षत हम तो अक्षय पद खों पाते।
आ गये हम तो गुरु चरण न में भक्ति अपनी बताते।।

ॐ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो अक्षय पद् प्राप्तये अक्षयं निर्पवामीति स्वाहा।

(पुष्प)

गुलाब केबड़ा कमल चमेली नाना कुसुम ल्याये।
काम बाण के नाश करन खों गुरू के चरण चढ़ाये।।

उपसर्ग विजेता-ध्यात्म योगी गुरु तुम सी सुचिता पाते।
आ गये हम तो गुरु चरणन में भक्ति अपनी बताते।।

ऊँ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो कामवाण विध्वसनाय पुष्पं निर्पवामीति स्वाहा।

(नैवेद्य)

भूख प्यास के नास आस से नैवेद्य चढ़ाते आये।
लडुआ खुरमा गोठा बरफी गुरु के चरण चढ़ाये।।
शुद्धात्म रूप मीठो रस पाते खूबई पकवान चढ़ाये।
आ गये हम तो गुरु चरणन में भक्ति अपनी बताते।

ऊँ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो क्षुधा रोग विंध्वंसनाय नैवेध निर्पवामीति स्वाहा।

(दीप)

कपूर ज्योति अरू दीपक की लौ दूर करै आंदीयारो।
जोई दीप चढ़ा दयो गुरु खों जो दे आत्म उजियारो।।
मोह रूप अंधियारो नासै स्व-पर राग मिटाते।
आ गये हम तो गुरु चरणन में भक्ति अपनी बताते।।

ऊँ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्पवामीति स्वाहा।

(धूप)

अनेक तपन से तपे तपस्वी गुरु खों धूप चढ़ाओ।
आठ करम को धामो हिय से तबई टार तुम पाहो।।
करमन रूपी ताप खपाते, अरु जीवन सफल बनाते।
आ गये हम तो गुरु चरणन में भक्ति अपनी बताते।।

ऊँ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्पवामीति स्वाहा।

(फल)

फल फलारी की थरियां भरके गुरु के चरण लाये।
मोक्ष महल को किंवरा पाते गुरु खों खूब चढ़ाये।।
मोक्ष महल के फाटक नैंगर अपनो गोड़ो बढ़ाते।
आ गये हम तो गुरु चरणन में भक्ति अपनी बताते।।

ऊँ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्पवामीति स्वाहा।

(अर्घ)

लोग-लुगाई ल्याये भद-भद महाअर्घ की थरियां।
मोक्ष महाफल खों पावे सब आ गये पईयां पईयां।।
गुरुजी में वात्सल्य है ऐसा बछता संग हों गईयां।
सांची सांचाी कहरये मईया, ऐसे गुरु करुं नईयां।।

ऊँ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो अर्न्घपद प्राप्तये अर्घं निर्पवामीति स्वाहा।

(जयमाला)

दोहा - विमल कीर्ति तुम हो गुरु, सन्मति से हो धीर।
रत्नत्रय की खान हो, तुमई पार्श्व महावीर।।

जय जय गुरु विराग तुमई सबके सहारे।
चिंतामाकी तुमई हो, तुमई तारणहारे।।
नगर पथरिया जन्म ले के धन्य कर दओ।
पथरन की नगरी खों भी रजत स्वर्णकर दओ।।
न बिसरडे वो दिन जब जन्म आप है लियो।
२ मई ६३ को दिन अबिसरन बना दिओ।।
कृर्षित भई श्रष्टि जब जनम है मयो।
माँ श्यामा तात कपूर जी खों हीरा मिल गयो।।
४ वर्ष की उमर में मुनि दर्श कराओ।
जब कर में झाड़ू लोटा ले मुनि भेष बनाओ।।
१६ वर्ष की उमर में वैराग्य धार लओ।
सन्मति गुरु से आपने संयम ग्रहण करो।।
दीक्षा होतई दओ इम्तिहान है खरो।
जब डायन टीवी रोग गरे सा परो।।
ठान लओ संकल्प, मुनि दीक्षई लेहें।
पर साधना तपस्या से तनकऊ न हलहें।।
मन को संकल्प औ द्रढ़ता काम कर गई।
डायन बीमारी टीवी बा छूमन्तर भई।।
उपरांत विमल सिंधु से मुनि दीक्षा धारी है।
तपश्चरण को देख नंवत श्रष्टि सारी है।।
२२३ दीक्षा दे सबको उद्धार कर रहे।
बेजई समाधी करा भव पार कर रहे।।
सर्वोदया टीका भी लिखी भक्ति भाव से।
सब को कल्याण होते रोई चाव से।।
रत्नत्रय टीका भी बरसात है रतन।
मार्ग में वे लग रहे जो कर रहे जतन।।
अंत में मोरो मनवा सब जोई कै रहो।
हो समाधी जब भी गुरु सान्निधि रहै।।
गुरु भक्ति के भाव घर आहैं बेंर बेंर।
सबई को कल्याण हो लगा रये हमटेर।।

ऊँ हूँ परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज यतिवरेभ्यो जयमाला संपूर्ण अर्घं निर्पवामीति स्वाहा।

भूली बिसरी माफ हो हम है मूरख राम।
एक भावना मन हारी हो सबको कल्याण।।

गुरु पूर्णिमा पर गुरु चरणों में समर्पित भक्तों की पुष्पाञ्जली

आचार्य श्री के चरणों में कोटि-कोटि नमोऽस्तु- नमोऽस्तु- नमोऽस्तु

हे गुरुवर आप संसार समुद्र में भटकने वाले प्राणियों को मोक्षमार्ग में लगाने वाले हैं आप निरंतर मोक्षमार्ग का उपदेश देते है। आप कभी राग द्वेष की या इधर-उधर की बात नहीं करते एक घंटे ही नहीं घंटो-घंटो भी आपके उपदेश एक मात्र सारभूत तत्प की बातों से भरे हुये होते हैं। आप अपने विशाल चतुर्विध संघ के साथ इस भूतल प विचरण करते हुये अपूर्व ही धर्म की प्रभावना कर रहे हो आपने इस धरा जैन धर्म की गरिमा और महिमा को ऊँचा किया है अत: आपका विराग नाम सार्थक हैं। पतझड़ की मिटाने के लिये वसंत चाहिये कुरीतियाँ मिटाने के लिये सम्यक संत चाहिये अहिंसा का ताण्डव ऐसे ही थोडे ही मिटेगा इसको मिटाने के लिए गणाचार्य विरागसागर जी जैसा संत चाहिए।

सविता जैन

गणाचार्य राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज

प.पू. श्रमणाचार्य श्री विरागसागर जी मुनि महाराज करूणानिधि हैं, वात्सल्य रत्नाकर है। आध्यात्म योगी हैं और सन्मार्ग दिवाकर हैं वे युगों-युगोंतक जयव-त होवं तथा श्रमण संस्कृति के आदर्शों को चरितार्थ करते रहे। उन्हें कोटि-कोटि नमोस्तु अवंदन पूर्वक मंगल भावना है कि 'विरागो वागीशो निज गुरु कृति कृान्तप्रवध: मुनिशेरे संबन्धो विदित महिमा मंगल कर:, चिरञ्जीत्यादेषो भव-भय दरो में गुरुवर: प्रकुयति कल्याणं भव भय हरो मे गरुवर:।' जो आचार्य विराग सागरजी प्रशस्त विद्याओं में वृहस्वति हैं जिन्होंने अपनी उत्कृष्ट साधना चर्या और कृतित्व से अपने परम पूज्य आचार्य श्री विमलसागर जी के कृतित्व को अधिक उजाकर किया है जो मुनिराजों द्वारा वन्दनीय हैं तथा स्व. के साथ -साथ विश्व का कल्याण करने वाले हैं जो संसार से भयभीत मानवों में मुकुट शिखर की भाँति सुशोभित है। वे हमारे दु:खों को दूर करें।

अनीता जैन (शैलेन्द्र कुमार)

P.P. yugpramukh Shramanacharya Ganacharya Shri 108 Virag sagar Maharaj ji ke Charno me Sat-Sat Namostu

Namostu Gurudev Namostu

पूज्य गुरुदेव के बारे में क्या कहें ये तो करूणा के धारी वात्सल्य रत्नाकर पर प्रभावी हैं। गुरुदेव के संघ का अनुशासन बहुत ही प्रभाव शाली है। ऐसा अनुशासन शायद ही किसी और संघ में देखने की मिला होगा। आचार्य श्री का सरल और सौम्य व्यक्तित्व एवं पूर्वापर चिंतन ही आचार्य श्री की अलग पहिचान है।

विजय कुमार जैन

आप समता के समुद्र हैं, गुणों की खान, ज्ञान के भंडार वृद्धों के मसीहा हैं आपकी भावना सदा जन कल्याण की एवं जीव दया से ओत प्रोत रहती है। आत्म प्रेम की पिचकारी में संयम की केशर धोली समता के पुंजो से जिसने जीवन भर होली खेली। गुरुवर को कोटि-कोटि नमोस्तु

अलका जैन,

गुरुवर की महिमा का गुणगान जितना भी करो थोड़ा है जैसे सूरज के सामने लाखों दीप जला दिये जायें तो भी सूरज का मुकावला नहीं कर सकते। सूरज तो सुबह उदयमान होकर सांय काल में अस्त हो जाता है परंतु पूज्य गुरुवर विराग सागर जी महाराज तो सदैव ही प्रकाश मान सूर्य हैं जिनका न उदय है न अस्त गुरुवर महासमुद्र है। जिस प्रकार समुद्र रत्नों की खान है जल से परिपूर्ण है उसी प्रकार मेरे पूज्य गुरुवर वो रत्नत्रय की खान हैं वात्सल्य से परिपूर्ण है उनके हृदय में उमड़ा हुआ वात्सल्य का समुद्र कभी भी खाली नहीं होता।

गुरुवर को बारम्बार नमोस्तु-३

श्रीमती सुसमा जैन

चारित्र शिरोमणि

अद्‌भुत समता आपकी- आज जहाँ विश्व का प्रत्येक व्यक्ति झुलस रहा है। क्षण क्षण प्रतिशोध प्रतिरोध की दुर्भावना रूपी अग्नि में, वहाँ पूज्य गुरुवर के अंतस् से प्रवाहित है क्षमा और ममता का निर्झर। यदि सामने वाला व्यक्ति किसी की सत्य बात पर उंगली उठाता है तो वह अपना हाथ उठाने को तैयार रहता है वहीं दूसरी ओर परम पूज्य गुरुवर पर उठाई गई अनेक अंगुलियां परंतु फिर भी गुरुवर रहे प्रतिरोध से सदा दूर क्योंकि जीवन को कसा है गुरुवर ने सत्य की कसौटी पर। दृढ़ विश्वास था कि सत्य तो सत्य ही रहेगा और आज वही तो कल अवश्य ही उद्‌घाटित होगा। आज संपूर्ण जहान पूज्य गुरुवर की सत्यता पर गौरवान्वित है साथ ही गुरुवर से सभी को यह सीख मिली कि सत्यता पर झूठ की छीटाकसी होने पर घबरायें न क्योंकि सत्य सत्य ही रहेगा और निश्चित ही विजयी होगा।

सौ.का. किरण जैन

निस्पृही संत

आचार्य विराग सागर जी महाराज- मुनिश्री विराग सागर जी महाराज को यदि निस्पृही संत की उपमा दी जाये तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं हैं। मुनिश्री का जीवन भी निस्पृही संत की तरह है इन्हें ना तो किसी से राग है और न ही किसी से द्वेष है। 'राग' हे तो केवल वीतराग भगवान से आचार्य श्री बचपन से ही निस्पृही स्वभाव के व्यक्ति है।

जहाँ पर पक्ष होता है वहीं पर पंथ होता है
उठा जो पंथ से ऊपर वही निर्ग्रन्थ होता है
हटाके राग-द्वेषों को बना है वीतरागी जो
वो निस्पृही संत ही एक दिन वहाँ अरहंत होता है।

गुरुवर के चरणों में शत्-शत् नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु

सुधा चौधरी

प्रातः स्मरणीय विश्व वंदनीय

परम पूज्य विराग सागर जी महाराज को नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु

प्रज्ञा के धनी एक बाल योगी दिगम्बर संत होना कई जन्मों की साधना का प्रतिफल है। ऐसे ही ज्ञान और प्रज्ञा से भरा हुआ एक व्यक्तित्व है। आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज जिनकी आंखों में प्रेम और वात्सल्य का सुमुंदर समाया है।

आपकी भाषा में शांत रस प्रधान है। आचार्य श्री का चुम्बकीय व्यक्तित्व एवं चेहरे पर खेलती मंद मुस्कान प्रत्येक श्रावक के लिए धर्म की ओर सहज प्रेरित करती है।

क्रोध तरसता है आपके पास आने को, मान मचलता है पास बैठने को, माया सकुची सी दूर खड़ी रहती है और जब आप हंसते है तो रोम-रोम मुस्कुराता है।

आप आगम के अगम्य योगी हैं। ऐसे संत पुरुष आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज को कोटि-कोटि प्रणाम।

नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।

जहाँ पूज्य गुरुदेव के चरण पढ़ जायें तो वह धरा व व्यक्ति धन्य हो जाता है। जहाँ परम पूज्य गुरुदेव आ जायें। वहाँ हर कठिन से कठिन कार्य सरल हो जाता है। जहाँ गुरुदेव का आशीष मिल जाये तो वहाँ कठिन से कठिन बीमारी दूर हो जाती है। जहाँ गुरुदेव की दृष्टि एक बार पढ़ जाये तो वह मनुष्य सीधे से पार हो जाता है। ऐसे हमारे गुरुवर करूणा निधान वात्सल्य की मूर्ति करूणा की मूर्ति, त्याग के सागर उपसर्ग विजेता है।

निस्पृही संत

जहाँ स्वयं व पर से मोह न हो वहाँ निस्पृह शब्द का उपयोग किया जाता है। ठीक उसी प्रकार हमारे परम पूज्य आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज है। जिन्होंने अपने जीवन को निस्पृहता से भर दिया है। वर्तमान के आधुनिक बढ़ते हुए

विज्ञान के विकास से पूर्व ही जैन शास्त्रों में उनका उल्लेख मिलता है जो हमारे जीवन में एक नया बदलाव लाया है। जो हमें गुरुदेव के द्वारा विहित हुआ है। ऐसे गुरुवर का अगर हम चाहें तब भी इस जिव्हा से उनका गुण गान नहीं गा सकते। गुरुवर की चर्या उनका आचरण व अपने मूलगुणों के प्रति कर्तव्य परायणता में उनकी निस्पहता झलकती है। जो जीवनमें हमारे लिए एक नया आयाम जगाती है।

हे गुरुवर मेरा यह उद्‌गार आप तक पहुंचता है तो मैं आपसे इतना ही कहना चाहती हूँ कि जब तक शीप में बारिश का जल नहीं आता तो उसमें मोती नहीं बन सकता ठीक उसी प्रकार जब तक हम अज्ञानियों के लिए आप का आशीर्वाद रूपी जल न मिले तब तक हम इस भव सागर से बाहर नहीं जा सकते।

इसलिये गुरुवर जिस प्रकार आपने अपना मार्ग चुना उसी निस्पृहता के साथ हमें भी अपना मार्ग बनाने के लिये आपके सानिध्य की जरूरत है। हे गुरुवर पुन: एक बार शाहगढ़ आ कर आप अपने भक्तों पर अपना अमृतरस बरसाइये।

नमोस्तु गुरुवर

श्री वर्षा डेवडिया, शाहगढ़

आचार्य श्री १०८ विरागसागर महाराज जी का गुणगान

परम पूज्य गुरुदेव गणाचार्य श्री १०८ विरागसागर जी महाराज अपार गुणों के भण्डार है। आचार्य श्री वृद्ध साधुओं को अपने संघ में रखते हैं। उनकी सेवा करते हैं, उनकी परेशानियाँ सुलझाकर उन्हें खुश रखते हैं। किसी वृद्ध को खुश रखना भी बहुत पुण्य की बात होती है। आचार्य श्री ने अपने माता-पिता की दीक्षा देकर अपने दायित्व का पालन किया। आचार्य श्री बहुत ही पुण्यशाली जीव हैं उन्होंने पहले तो अपने आप को वैराग्य पूर्ण बनाया फिर अपने माता-पिता को वैराग्य उत्पन्न कराया।

आचार्य श्री के संघ अनुशासन की सम्पूर्ण मान्यता है। मैने देखा कि क्षु. विसुदृढ़ श्री माता जी स्वाध्याय के समय बाहर बैठी थी। क्योंकि उनका दुपट्टा छत पर सूख रहा था और वह बिना दुपट्टे के स्वाध्याय में नहीं जा सकती थी। शायद इसे ही कहते है-'अनुशासन' आचार्य श्री ने ८८ समाधि करा कर उन जीवों की पर्याय को सुधार दिया।

ऐसे गुरुवर के चरणों में बारम्बार नमोस्तु।

गणाचार्य

आपके द्वारा दिखाई जाती क्षमा, शीलता, तपस्वियों के लिए इतिहास में अंकित रहेगी। आचार्य श्री के सम्पूर्ण जीवन में ऐसा प्रतीत होता है कि संयम व साधना के बल पर असंभव को भी संभव बनाया जा सकता है। बचपन का संकल्प और मन की शक्ति के बल पर तथा स्थितियों का संयोग इन तीनों के बल पर आचार्य श्री के जीवन को महान बना दिया।

गुरुवर को मेरा नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।

श्रीमती शशि जैन, जबलपुर

विज्ञापन दर

रंगीन - फुल पृष्ठ	-	11000/-	**ब्लेक एण्ड व्हाईट - फुल पृष्ठ**	-	5000/-
रंगीन - हॉफ पृष्ठ	-	6000/-	**ब्लेक एण्ड व्हाईट - हॉफ पृष्ठ**	-	2500/-
रंगीन - चौथाई पृष्ठ	-	3000/-	**ब्लेक एण्ड व्हाईट - चौथाई पृष्ठ**	-	1500/-

'विरागवाणी' मासिक पत्रिका की सदस्यता एवं विज्ञापन हेतु संपर्क करें-

प्रबंध सम्पादक : श्री अनूप कुमार जैन

जी-१४१ गौतम नगर, भोपाल-२३ ☎: 0755-2789703, मो.9425016879

प्रश्न सभी के उत्तर गुरुवर के

१. **नमोस्तु गणाचार्य भगवन्! आर्यिका माता जी सामायिक के आवर्तन कैसे करें?**

पूज्य गुरुदेव- यदि माता जी स्वयं की वसतिका में पुरुष आदि से वर्जित स्थान पर सामायिक करती है तो उन्हें मुनिराज वत् चारों दिशाओं में खड़े होकर आवर्तन और शिरोनति करना चाहिए तथा खड़े होकर सामायिक भी कर सकती है। लेकिन यदि उस स्थान पर पुरुष बालक आदि हैं सार्वजनिक स्थान है तो अपने स्थान पर बैठकर ही आवर्तन और सामायिक करें क्योंकि यहाँ मर्यादा प्रधान है। सार्वजनिक स्थान पर खड़े होकर आवर्तन करने से कायोत्सर्ग में लीन होने के समय वस्त्रादि हवा से उड़ सकते हैं जिसका समाने बैठे पुरुष आदि पर गलत प्रभाव पड़ सकता है एवं मर्यादा नहीं रह पाती है अत: इन सब बातों को ध्यान रखते हुए वे अपनी चर्या करती हैं।

२. **नमोस्तु आचार्य भगवन्! पड़गाहन के समय यदि छुल जाए तो मुद्रा कहाँ खोलना चाहिए?**

आचार्य भगवन्- मुद्रा पुन: मंदिर आकर भगवान के सामने ही खोलना चाहिए। क्योंकि मुनि आदि भी विधि न मिलने पर ऐसा ही करते हैं। लेकिन यदि चौका काफी दूर हो और वहाँ दूसरा मंदिर हो तो वहाँ भी मुद्रा खोल सकते हैं और पुन: शुद्ध वस्त्र पहनकर वहाँ से भी आहार के लिए उठ सकते है। परन्तु यदि मंदिर धर्मशाला आदि वहाँ नहीं है तो पुन: वापस आना होगा किसी ग्रहस्थ आदि के घर में वस्त्र चेन्ज नहीं कर सकते। एक बात और यदि बहुत भीड़ है लोगों ने घेर लिया हो मंदिर आने ही न दे तो ऐसी परिस्थिति में जहाँ है वहीं आचार्य एवं मुनिजन मुद्रा खोल देते हैं।

३. **नमोस्तु आचार्य भगवन्! आहार करते समय त्यागी हुई वस्तु खाने में आ जाये तो क्या करें?**

आचार्य श्री- मूलाचार के अंदर ३२ अंतरायों में प्रत्याख्यान सेवन नाम का एक अंतराय है इसका मतलव है त्यागी हुई वस्तु के सेवन होने पर अंतराय करें यही सही विधि है। लेकिन, किन्तु परन्तु ये सभी अपवाद मार्ग हैं। आमतौर पर त्याग रसना इन्द्रिय को जीतने के लिए कराया जाता है इसलिए एक ग्रास धोके से आ जाए तो उसकी छूट यह सब आचार्यों की आज्ञा पर निर्भर है।

४. **नमोस्तु आचार्य भगवन्! ठसका, खांसी, छींक आदि से आहार के समय यदि मुख से पानी बाहर आ जाये तो क्या करें?**

आचार्यश्री- अंतराय करें।

५. **नमोस्तु आचार्य भगवन्! मुन्द्रा लेकर जाते समय यदि छींक आदि से नाक आदि आ जाये तो क्या करना चाहिए?**

आचार्य श्री- साफ करें लेकिन बाद में आलोचना करें।

६. **नमोस्तु आचार्य गुरुवर! आहार शुरु होने के बाद यदि तीन, चार, इन्द्रिय जीव मरा हुआ दिखे तो क्या करें?**

आचार्य श्री- मूलाचार में पंचेन्द्रिय मृत दर्शन नाम का अंतराय है विकलेन्द्रिय का नहीं लेकिन यदि विकलेन्द्रिय मरता हुआ दिखे उसी समय किसी का पैर आदि रख जाये तो अंतराय करें।

विद्यार्थियों का टाइम टेवल

प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज

वर्तमान में बालकों में पहले समय की अपेक्षा बुद्धि का विकास अधिक है किन्तु शिक्षा में नैतिक शिक्षा के अभाव में अच्छे संस्कार व उचित दिन चर्या के अभाव में जो उपलब्धि होना चाहिए वह नहीं होती। वौद्धिक क्षमता के अच्छे विकास के लिये विद्यार्थियों कि दिनचर्या व्यवस्थित हो तो अच्छी उपलब्धि है तथा एकाग्रता का विकास होता जिससे पढ़ने में अधिक उपयोग लगता है। नियमित एवं व्यवस्थित दिनचर्या का पालन करने वाले छात्र अपने जीवन में अच्छी उन्नति कर लेते है। माता पिता या अभिभावकों को चाहिये कि वह विद्यार्थियों की व्यवस्थित दिन चर्या बनानेमें सहयोगी बनें-

विद्यार्थियों की आदर्श दिन चर्या-

प्रात:	४.०० बजे-	उठना, परमात्मा का स्मरण करना।
	४.१५ बजे-	हाथ मुँह घोकर, माता पिता के चरण छूकर उनका आशीष ग्रहण करना।
	४.३० बजे-	होम वर्क पूर्ण करना
	६.०० बजे-	नैत्यिक क्रियाएँ, शौच जाना, मंजन करना आदि
	६.३० बजे-	योगासन
	७.०० बजे-	स्नान करना, कपड़े धोना।
	७.३० बजे-	मंदिर जाकर भगवत दर्शन, पूजन करना आदि यदि साधु संघ हो तो उनके दर्शन, प्रवचनों का लाभ लेना।
	८.०० बजे-	नास्ता करना।
	८.१५ बजे-	पिताजी के /गृह कार्य आदि में सहयोग करना।
	९.१५ बजे-	(यदि साधुसंघ का पुण्य लाभ मिले तो उन्हें आहार देना) भोजन करना।
	९.४५ बजे-	स्कूल जाना। स्कूल का समय अन्य हो तदानुसार परिवर्तन करना
सायं	४.०० बजे-	अच्छे खेल खेलना
	५.०० बजे-	घर आकर हाथ मुँह धोकर भोजन करना।
	५.३० बजे-	पिताजी के दुकान आदि/ गृह कार्य में मदद करना।
रात्रि	७.३० बजे-	प्रभुभक्ति, संध्या वंदना, आरती आदि करना एवं गुरु सेवा करना।
	८.३० बजे -	अध्ययन करना।
	१०.०० बजे-	विश्राम करना सो जाना।

संस्कार सुरभि से साभार

आवश्यक सूचना

आजीवन (ग्यारह वर्षीय) एवं त्रिवर्षीय सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता अवधि समाप्त हो गई है या होनेवाली है। अत: सदस्यता नवीनीकरण करा लें जिससे पत्रिका निरन्तर भेजी जा सके।

प्रबन्ध सम्पादक : विरागवाणी

आम के आम, गुठली के दाम

संकलन : श्रमणी आ. विवक्षाश्री माता जी

आम सभी फलों में सर्वश्रेष्ठ फल है। इसलिये यह फलो का राजा, अमृतफल माना जाता है। आम का पेड़ सैकड़ों वर्ष तक बना रहता है। भारत देश में प्रतिवर्ष ८ लाख टन से भी अधिक आमफल का उत्पादन होता है। वैशाख से ज्येष्ठ या आषाढ़ माह तक (वर्षा आने के समय तक) आम का सही मौसम माना जाता है। इसके बाद वर्षा होते ही आम खराब होने लगता है। आम की अनेक किस्मे है जिनमें से लगभग ७०० से ८०० किस्म भारत में होते हैं।

किसी आम का आकार गोल होता है तो किसी का लंबगोल, कोई आम छोटा होता है तो कोई दो सेर ढाई सेर वजन का, किसी आम में रस अधिक होता है तो किसी में रेशे। आम रंगों में भी विविधता पायी जाती है- जैसे- पीला, हल्का पीला, गुलाबी, फूल-गुलाबी, हरा आदि लखनऊ के आम का रंग सफेद होता है। दुनिया भर में सफेद आम सिर्फ लखनऊ में ही होता है।

- ❖ औषध- प्रयोग की दृष्टि से कलमी आम की अपेक्षा देशी आम ज्यादा लाभदायक है क्योंकि इसका रस शीघ्र पच जाता है। खट्टे आम की तुलना में मीठा आम ज्यादा लाभप्रद है।
- ❖ रेशों से रहित, अत्यंत मधुर, पका हुआ ज्यादा गर्भवाला एवं पतली या छोटी गुठलीवाला आम उत्तम माना जाता है।
- ❖ भोजन के साथ आम का सेवन करने से मेदवृद्धि होती है, हिमोग्लोबीन एवं लालकण बढ़ते हैं तथा कफ नहीं बनता। दूध के साथ सेवन से वीर्य की वृद्धि होती है। आम आँतों के लिए उत्तम दवा का काम देता है।
- ❖ जठर में पाचनतंत्र संबंधी रोग, रक्त की दुर्बलता पके आम का सेवन दूर करता है।
- ❖ दूध और घी के साथ आम का सेवन वायु एवं पित्त विकारों को शमन करता है।
- ❖ रस चूसकर खाया आम पचने में हल्का और काटकर खाया आम भारी होता है।
- ❖ आम को सुखाकर अमचूर तैयार किया जाता है जो इमली की खटाई से श्रेष्ठ एवं पथ्य एवं रूचिकर है। आम का मुरब्बा रक्तवृद्धि करता है।
- ❖ आम की गुडली रक्तस्राव वाले अर्श, दस्त, रक्तातिसार (पेचिरा) और खटपित्त में बहुत उपयोगी मानी जाती है। गुठली से निकलनेवाला तेल संधिवात और शुल पर लाभ दायक है। आम की गुठली कसैली, खट्टी एवं मधुर होने से उल्टी, अतिसार तथा हृदय दाह को मिटाती है। आम के पत्ते (कोमल) रूचि उत्पादक तथा कफ-पित्त नाशक हैं।
- ❖ पके आम का रस कपड़े पर फैलाकर धूप में सुखाया गया हो और फिर उसी के ऊपर दूसरा रस फैलाकर सुखाया जाये। यह आमवर्त रूचि उत्पन्न करने वाला, मल को और सूर्य किरणों से पका होने के कारण तृषा, उल्टी, वायु और पित्त को दूर करने वाला माना जाता है।
- ❖ कच्चे आम आमाशय को बल प्रदान करते है और रक्तपित का नाश करते हैं।
- ❖ कच्चे आम को सेंककर, खूब नर्मकर, उसके गर्भ में शक्कर मिलाकर अवलेट सदृश बनाकर हैजे अथवा प्लेग के समय देने से बहुत लाभ होता है।
- ❖ कच्चे आम का मुरब्बा १-२ तोला खाने से पित्त को शान्त करता व रूचि को बढ़ाता है। यह पौष्टिक भी है।
- ❖ आम की गुठली छाछ अथवा चावल के पसावन में पीसकर देने से रक्तातिसार (पेचिश) मिटता है।
- ❖ आम की गुठली के चूर्ण को पानी में घोटकर शरीर पर लगाने के बाद स्नान करने से घमोरियाँ नहीं होती और हुई हो तो मिट जाती है।
- ❖ आम की गुटली के रस का नस्य लेने से नाक में से खून निकलना बंद होता है।
- ❖ कच्चे आम का पना गर्मी के दिनों में पीने से लू नहीं लगती है।
- ❖ ज्यादा आम खाने से अपच होने पर पानी के साथ सोंठ का चूर्ण लेने से फायदा होता है।

आध्यात्मिक शंका-समाधान

प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज

वर्तमान भौतिक वादी युग में संसारी प्राणी भोगों की अभिलाषाओं की पूर्ति के लिये दिनरात पैसा कमाने में लगा है। जैन कुल में जन्म लेकर भी छः आवश्यक कर्त्तव्यों को भूलता जा रहा है। संस्कारित परिवारों में देवदर्शन पूजन तो फिर भी व्यक्ति करता है पर स्वाध्याय के लिये उसके पास समय नहीं और जो स्वाध्याय भी करते हैं वे आर्ष परम्परा के आचार्य प्रणीत ग्रन्थों का स्वाध्याय या तो करते ही नहीं या करते हैं तो उसके सही अर्थ भावार्थ को न समझ पाने के कारण ये उन लोगों द्वारा कहे जाते हैं जो अपनी पंथ, आम्नाय विचारधारा या ख्याति लाभ प्रशंसा का कारण कुछ का कुछ बताकर भ्रमित कर देते हैं।

प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ने मोक्षमार्ग में आरूढ़ होकर क्षितिज की ऊँचाईयों को प्राप्त नहीं किया बल्कि वर्तमान समय के सबसे बड़े चतुर्विध संघ के नायक हैं। ज्ञान की असीम गहराईयों में डुबकी लगाकर सर्वोदया, रत्नत्रय वर्धिनी, श्रमण प्रबोधनी, श्रमण सम्बोधनी आदि संस्कृत टीकाओं के अलावा १५० से भी अधिक आलेखों द्वारा जन मानस के कल्याण के लिये जिनागम को दुर्लभ रत्न प्रदान किये हैं। चारों अनुयोगों को समझाने हेतु जन सामान्य की शंकाओं के समाधान हेतु क्रमिक प्रस्तुति-

शंका काल लब्धि ही सम्यक्दर्शन का मुख्य कारण माने तो क्या दोष आयेगा?

समाधान- (रा.वा. १/३/१०२४/६)में कहा है कि-

यदि हि सर्वस्थ कालों हेतुरिष्टः स्थात् बाहयाभ्यंतर कारण नियमस्य दृष्टस्येष्टस्थ वा विरोधः स्यात्।

अर्थ- यदि सबका काल ही कारण मान लिया जाये (अर्थात् केवल काल लब्धि से ही मुक्ति होना मान लिया जाये) तो बाह्य एवं आभ्यंतर कारण सामग्री का ही लोप हो जायेगा।

शंका- जातिस्मरण आदि बाह्य कारण कौन कौन से है?

समाधान- जिन बिम्ब दर्शन धर्म श्रमण जाति स्मरण, वेदना अथवा देवर्द्धिदर्शन इस प्रकार जाति स्मरण आदि चार कारण हैं।

शंका- किस गति में कौन कौन से कारण पाये जाते हैं?

समाधान- १ से ३ नरक में धर्म श्रमण जाति स्मरण और वेदना ये तीन, ४ से ७ नरक में जाति स्मरण और वेदना ये दो कारण पाये जाते हैं। भोग भूमिज तिर्यञ्चों में जिन बिम्ब दर्शन, धर्म श्रवण जाति स्मरण ये तीन कारण कर्म भूमिज तिर्यञ्चों में उपर्युक्त तीन और वेदना ये चार कारण पाये जाते हैं।

भोग भूमिज मनुष्यों में - उपर्युक्त तीन कारण पाये जाते हैं।

कर्म भूमिज मनुष्यों में - उपर्युक्त चार कारण पाये जाते हैं।

भवन वासी देवों में - जिन बिम्ब दर्शन, धर्मश्रवण, जाति स्मरण।

व्यतंर ज्योतिषी, सौधर्म - देवर्दिदर्शन ये चार कारण पाये जाते है। सहस्त्रांर तक में

आनतादि चार स्वर्गों में- उपर्युक्त में से देवर्द्धिदर्शन के बिना तीन कारण।

नवग्रैवेयक में - जिन महिमा दर्शन के बिना उपर्युक्त तीन कारण

अनुदिश व अनुत्तर में- एक भी कारण नहीं पाये जाते हैं क्योंकि ये देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं।

शंका- जाति स्मरण और जिनबिम्ब दर्शन क्या निसर्गज सम्यग्दर्शन है?

समाधान- वइ सग्गियमवि पदम सम्मत्तं तच्चट्ठे उत्तं तं हि एत्थेव दट्ठव्वं, जाइस्सरण जिण बिंब दसणेहि विणा। उप्पज्जभाणणइ सग्गिय पदम सम्मत्तस्स असंभवादो (ध ६/१/९,९,३०/४३०/९)

अर्थ- तत्त्वार्थ सूत्र में नैसर्गिक प्रथम सम्यक्त्व का भी कथन किया गया है, उसका भी पूर्वोक्त कारणों से उत्पन्न

हुए सम्यक्त्व में ही अन्तर्भाव कर लेना चाहिए, क्योंकि जाति स्मरण और जिनबिंब दर्शन के बिना उत्पन्न होने वाला नैसर्गिक प्रथम सम्यक्त्व असंभव है।

शंका- देवर्द्धि दर्शन का जाति स्मरण में समावेश क्यों नहीं होता?

समाधान- इस विषय को (ध.पु.६/१,९-९,३७/४३३/५) में इस प्रकार कहा है कि-

देवर्द्धि दंसणं जाइ सरणम्मि किण्ण पविसदि। ण पविसदि, अप्पणो अणिमादि रिद्धिओ दट्ठूणं एदाओ रिद्धीओ जिण पण्णत्त धम्माणुट्ठाणादो जादाओ त्ति पढ़म सम्मत्त पडिवज्जणं जाइस्सरण निमित्तं। सोहम्मिंदादि देवाणं महिद्धीओ दट्ठण एदाओ सम्मद्दंसण संजुत्त संजम फलेण जादाओ, अहपुण सम्मत्त विरहिददव्वं संजम फलेण वाहणादिणीच च देवेसु उप्पणो त्ति णाद्ण पढम सम्मत्तग्गहणं देविर्द्धि दंसण णिबंधणं। तेण ण दोण्ह मेयत्त मिदि। किं च जाइस्सरण मुप्पण्ण पढम समयप्पहुडि अंतो मुहुन्त कालब्भंतरे चेव होदि। देविद्धि दंसणं पुण कालंतरे चेब होदि, तेण ण दोण्हमेयत्तं। एसो अत्थो णेरइयाणं जाइस्सरण वेयणाभिभव णाणं पि वत्तव्वो।

अर्थ- देवर्द्धि दर्शन का जातिस्मरण में समावेश क्यों नहीं होता?

उत्तर- (१) नहीं होता, क्योंकि अपनी अणिमादिक ऋद्धियों को देखकर जब (देवों को) ये विचार आते हैं- कि ये ऋद्धियाँ जिन भगवान द्वारा उपदिष्ट धर्म के अनुष्ठान से उत्पन्न हुई है तब प्रथम सम्यक्त्व की प्राप्ति जाति स्मरण निमित्तक होती है।

किन्तु जब सौधर्मेन्द्रादिक देवों की महाऋद्धियों को देखकर यह ज्ञान उत्पन्न होता है कि ये ऋद्धियाँ सम्यग्दर्शन से संयुक्त संयम के फल से प्राप्त हुई है। किन्तु मैं सम्यग्दर्शन से रहित द्रव्य संयम के फल से वाहनादिक नीच देवों में उत्पन्न हुआ हूँ तब प्रथम सम्यक्त्व का ग्रहण देव ऋद्धि दर्शन निमित्तक है। इससे ये दोनों कारण एक नहीं हो सकते हैं।

(२) तथा जाति स्मरण उत्पन्न होने के प्रथम समय से लगातार अंतर्मुहूर्त काल के भीतर ही होता है। किन्तु देवर्द्धि दर्शन उत्पन्न होने के समय से अंतर्मुहूर्त काल के पश्चात् ही होता है। इसलिए भी उन दोनों कारणों में एकत्व नहीं है।

(३) यही अर्थ नारकियों के जाति स्मरण और वेदनाभिभव रूप कारणों में विवेक के लिये भी कहना चाहिये।

हँसते रहो हँसाने के लिए

१. मित्र- यदि मैं मर जाऊँ तो तुम क्या करोंगे?
दूसरा मित्र - तुम्हारा अंतिम संस्कार।

२. इंस्पेक्टर-(मुर्गी वालों की जाँच करते हुए) क्यों तुम मुर्गियों को खिलाते क्या हो, बहुत मस्त दिखती हैं?
एक मुर्गी पालन वाला- किसमिस की खीर।
इंस्पेक्टर- १००/- निकाल, इतना तो इंसानों को खाने नहीं मिलता।
दूसरा मुर्गी पालक- (डर से) हम कुछ नहीं खिलाते, इन्हें पैसे दे देते हैं, जो खाना हो बाजार से खा लेती हैं।

३. ऑपरेशन के बाद मरीज- डॉक्टर साहब, क्या अब मैं रोग मुक्त हूँ?
सामने से जवाब मिला- बेटा, डॉक्टर साहब तो धरती पर ही रह गये मैं तो चित्रगुप्त हूँ।

४. दुकानदान- बहुत देर से सामान सूंघ रहे हैं कुछ लेना है या नहीं?
ग्राहक- सूंघने में कौनसे पैसे लगते हैं।

कुमारी महक जैन

आषाढ मास के व्रत कल्याणक महोत्सव

३० जून २०१८	आषाढ कृष्ण २	श्री आदिनाथ जी गर्भ कल्याणक
२ जुलाई २०१८	आषाढ कृष्ण ४	श्री वासुपूज्य जी गर्भ कल्याणक
६ जुलाई २०१८	आषाढ कृष्ण ८	अष्टमी व्रत, श्री विमलनाथ जी मोक्ष कल्याणक
८ जुलाई २०१८	आषाढ कृष्ण १०	श्री नमिनाथ जी जन्म, तप, कल्याणक
१० जुलाई २०१८	आषाढ कृष्ण १२	रोहिणी व्रत
१२ जुलाई २०१८	आषाढ कृष्ण १४	चतुदर्शी व्रत
१८ जुलाई २०१८	आषाढ शुक्ल ६	श्री महावीर स्वामी जी गर्भ कल्याणक
१९ जुलाई २०१८	आषाढ शुक्ल ७	श्री नेमीनाथ जी मोक्ष कल्याणक
२० जुलाई २०१८	आषाढ शुक्ल ८	अष्टमी व्रत, अष्टान्हिका पर्व प्रारंभ
२६ जुलाई २०१८	आषाढ शुक्ल १४	चतुदर्शी व्रत, चातुर्मास्य व्रत नियमादि प्रारंभ
२७ जुलाई २०१८	आषाढ शुक्ल १५	अष्टान्हिका पर्व पूर्ण, गुरु पूर्णिमा

जुलाई माह के महोत्सव दिवस

जन्म/दीक्षा/पुण्यतिथि	तारीख	स्थान /नाम
जन्म दिवस	१.७.१९५१	मडावरा (उ.प्र.), श्रमण विश्वाक्षर सागर जी।
जन्म दिवस	१.७.१९६९	पथरिया (म.प्र.), क्षु. विवक्षित सागर जी।
जन्म दिवस	१.७.१९८२	सागर (म.प्र.), श्रमणी आ. विकाम्या श्री माता जी।
जन्म दिवस	२.७.१९७७	कुवरपुर (म.प्र.), श्रमण श्री विश्रांत सागर जी।
जन्म दिवस	२.७.१९७८	जबलपुर (म.प्र.), आ.श्री विकर्ष (प्रज्ञ) सागर जी।
दीक्षा दिवस	३.७.२०११	किशनगढ़ (राज.), ऐ. विश्वदृगसागर जी, ऐ. विराजसागर जी, क्षु. विश्वजिन सागर जी, क्षु. विश्वदक्ष सागर जी, क्षु. विश्वभानु सागर जी, क्षु. विश्वहित सागर जी, क्षु. विश्वनाथ सागर जी, क्षुल्लिका विप्रदाश्री माता जी, क्षु. विभद्राश्री माता जी।
दीक्षा दिवस	४.७.२०१०	उदयपुर (राज.), श्रमण श्री विधेय सागर जी, श्रमण श्री विश्वाक्षर सागर जी, श्रमणी वियोजना श्री माता जी, श्रमणी विसंयोजना श्री माता जी, श्रमणी विचक्षणा श्री माता जी, श्रमणी विरक्षणाश्री माता जी, श्रमणी विदर्शनाश्री माताजी, क्षु. विश्व प्रभु सागर जी, क्षु. विश्वबन्धु सागर जी, क्षु. विदेहसागर जी, क्षुल्लिका विदितश्री माताजी, क्षु. विजितश्री माताजी, क्षु. विदिताश्री माताजी, क्षु. विजिता श्री माताजी, क्षु. विस्मिताश्री माताजी, क्षु. विभूषणाश्री माताजी, क्षु. विभाषाश्री माताजी, क्षु. विभूषाश्री माताजी, क्षु. विरतश्री माताजी, क्षु. विरदश्री माताजी, क्षु. विनोदश्री माता जी।
जन्म दिवस	४.७.१९५३	भिण्ड (म.प्र.) श्रमण श्री विश्वसूर्य सागर जी।
जन्म दिवस	४.७.१९७९	धनगौल (उ.प्र.), श्रमण श्री विभास्वर सागर जी।
जन्म दिवस	१३.७.१९९९	ग्वालियर (म.प्र.) क्षु. विनियोग सागर जी।
जन्म दिवस	१५.७.१९७९	सांवला (राज.) श्रमणी आ. वियोजनाश्री माता जी।
जन्म दिवस	१८.७.१९८२	भिण्ड (म.प्र.) श्रमणी आ. विप्रभाश्री माता जी।
जन्म दिवस	२४.७.१९८३	ललितपुर (उ.प्र.) श्रमण श्री विभंजन सागर जी।

विराग वर्ग पहेली 31

उदाहरण – र वि रा ग नहीं करना चाहिए। (प.पू. गणाचार्य गुरुवर का नाम) जैसे–विराग

सि	स्व	र्ण	क	म	जी	जी	ल
द्ध	बि	मु	क्ता	गि	र	ना	र
व	कूछा	ए	भ	ख	हा	क्त	पु
र	कि	भा	शि	द्रो	आ	व	पा
कू	ना	द	एँ	ण	जु	वा	चं
ट	म्मे	ग	जु	गि	पु	ग	जि
स	ओ	गु	रू	र	गि	ना	नै
म	धु	रा	चौ	रा	सी	या	द

विराग वर्ग पहेली 30 के उत्तर

(1)

(2)

(3)

(4)

(5)

(6)

(7)

(8)

(9)

(10)

नोट– (1) इसमें आपको १० पारसनाथ भगवान के ही क्षेत्र के नाम ढूढ़ने हैं।

(2) जहाँ उत्तर मिले वहाँ ☐ डब्बा बनाये व क्रम से नाम लिखें।

(3) उदा.- इसमें नाम आड़े, तिरछे, ऊपर से नीचे, नीचे से ऊपर भी हो सकता है।

उत्तर भेजनेवाले का नाम व पता (स्पष्ट तथा शुद्ध)

नाम .....मो. .....

पिता/पति का नाम .....

पता .....